 ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक
गुरमति ज्ञान

भादों-आश्विन, संवत् नानकशाही ५४७
वर्ष ९ अंक १ सितंबर 2015

संपादक : सिमरजीत सिंह

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन : 0183-2553956-60
<u>एक्सटेंशन नंबर</u>
वितरण विभाग 303 संपादकीय विभाग 304



फैक्स : 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

ISSN 2394-8485

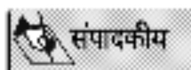
विषय-सूची

गुरबाणी विचार

कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा हउ तिसु पहि आपु वेचाई ॥१॥
दरसनु हरि देखण कै ताई ॥
क्रिपा करहि ता सतिगुरु मेलहि हरि हरि नामु धिआई ॥१॥रहाउ॥
जे सुखु देहि ता तुझहि अराधी दुखि भी तुझै धिआई ॥२॥
जे भुख देहि त इत ही राजा दुख विचि सूख मनाई ॥३॥
तनु मनु काटि काटि सभु अरपी विचि अगनी आपु जलाई ॥४॥
पखा फेरी पाणी ढोवा जो देवहि सो खाई ॥५॥
नानकु गरीबु ढहि पइआ दुआरै हरि मेलि लैहु वडिआई ॥६॥ *(पन्ना ७५७)*

सूही राग में श्री गुरु रामदास जी उपरोक्त शबद में खुद को केंद्र बनाकर हम कलयुगी जीवों को समझा रहे हैं कि हे भाई! यदि कोई सज्जन पुरुष मुझे मेरे प्रीतम-प्रभु से मिला दे, मुझे उसके दर्शन करा दे तो ऐसे सज्जन पुरुष, ऐसे सतिगुरु के आगे मैं खुद को बेच दूंगा अर्थात् उस पर से खुद को कुर्बान कर दूंगा। गुरु जी आगे फरमान करते हैं कि ऐसा सतिगुरु तभी मिलता है यदि प्रभु की कृपा-बख्शिश हो तथा तभी हरि का नाम सिमरन किया जा सकता है। हे प्रभु! यदि तू मुझे सुख दे तो भी मैं तेरी ही आराधना करूंगा तथा दुख में भी तेरा ही सिमरन करूंगा। हे प्रभु! यदि तू मुझे भूखा रखे तो भी मैं तेरी कृपा द्वारा खुद को खुशहाल ही अनुभव करूंगा तथा ऐसे दुखों में भी खुद को सुखी प्रतीत करूंगा। तेरे दर्शन की खातिर यदि ज़रूरत पड़े तो मैं अपना तन-मन काट-काट कर सब तुझे अर्पण कर दूंगा तथा अग्नि में भी खुद को जला दूंगा। तेरे दर्शन के लिए मैं पंखा झुलाऊंगा, पानी ढोऊंगा तथा तू जो कुछ भी मुझे खाने के लिए देगा वही खुश होकर खा लूंगा। हे प्रभु! मैं तेरे दर पे आ पड़ा हूं, तू मुझे अपने चरणों से जोड़ ले, मुझे अपना बना ले।

कहने का तात्पर्य यह कि हमें परमात्मा से मिलाने वाले सतिगुरु पर से खुद को न्यौछावर तक कर देने की भावना रखनी चाहिए, जिसके माध्यम से या जिसके बताए मार्ग पर चलकर हमें परमात्मा के दर्शन हो सकें। हमें परमात्मा की कृपा का पात्र बनना चाहिए क्योंकि उसकी कृपा से ही सतिगुरु मिलेंगे जो हरि का नाम जपाएंगे। हमें दुख-सुख दोनों में ही परमात्मा का नाम-सिमरन करना चाहिए। हम भूख लगने पर भी खुद को तृप्त ही कहें तथा दुख में भी सुख मनाएं। तन-मन काट कर, अग्नि में जल जाने तक की भी मन में भावना हो। गुरु-घर में संगत को पंखा झुलाना तथा पानी की सेवा करते हुए जो भी खाने को मिले वो प्रसन्नतापूर्वक छक लेना चाहिए। हम प्रभु के दर पर आकर इस प्रकार पूर्ण समर्पण-भाव के साथ गिर जाएं कि वह मालिक हमें अपने से मिला ले तथा हम सांसारिक कष्टों से ऊपर उठते हुए इसी मनुष्य-जन्म में ऊंचे रूहानी आनंद को महसूस कर सकें। 



सर्वसांझीवालता

मानवीय जन्म बहुमूल्य, दुर्लभ एवं अकाल पुरख से मिलाप का सुनहरी अवसर है। जीवन को सफल बनाने व प्रभु को पाने का मार्ग प्यार, सद्भावना एवं सर्वसांझीवालता की भावना में विचरण करना है।

मनुष्य सदैव काल ही छोटे-बड़े, ऊंच-नीच, अमीर-गरीब और मज़हब एवं ईर्ष्या में बहुत बुरी तरह से जकड़ा रहा है। सिक्ख गुरु साहिबान और भक्त साहिबान ने इस असहनीय हालत को प्रभु भक्ति के रंग में ढालने के बहुत प्रयत्न किए। इस कार्य के लिए श्री गुरु नानक देव जी ने सुखमयी सरकारी नौकरी तथा घर-गृहस्थी के सम्पूर्ण सुख-आराम त्याग कर अपना सम्पूर्ण जीवन लगा दिया। श्री गुरु नानक देव जी का मुख्य उद्देश्य सर्वसांझीवालता था। यही उद्देश्य श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक निरंतर विकास करता गया।

पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने सर्वसांझीवालता के उद्देश्य को दृढ़ करने के लिए बहुत प्रयत्न किए। श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु अमरदास जी के पद चिन्हों पर चलते हुए श्री गुरु रामदास जी द्वारा बसाई गई सर्वसांझीवालता की प्रतीक नगरी श्री अमृतसर में सर्व सांझे स्थान सचखंड श्री हरिमंदर साहिब का शिलान्यास अज़मत वाले मुसलमान फ़कीर साई मीयां मीर जी द्वारा करवाया। यह प्रथम धर्म स्थान था, जिसके प्रवेश द्वार चारों दिशाओं की तरफ रखवाकर यह एलान किया गया था कि यह धर्म स्थान सब का सांझा है। यहां पर आने की किसी को मनाही नहीं है। श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री अमृतसर की पावन धरती पर श्री रामसर साहिब सरोवर के किनारे विराजमान होकर गुरु-घर के अनन्य सेवक एवं विद्वान भाई गुरदास जी की सेवाएं लेते हुए १६०४ ई में श्री आदि ग्रंथ साहिब जी की संपादना की। यह सर्वसांझीवालता को दृढ़ करने के लिए अहम कदम था। दशम पातशाह साहिबे-कमाल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सन् १७०६ ई में दमदमा साहिब, तलवंडी साबो की पावन धरती पर विराजमान होकर भाई मनी सिंघ और बाबा दीप सिंघ जी की सेवाएं लेते हुए नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी भी शामिल की। सन् १७०८ ई में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने ज्योति-जोत समाने से पूर्व श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में दस पातशाहियों की ज्योति को टिकाकर गुरगद्दी पर विराजमान कर दिया।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी सर्वसांझीवालता का भंडार है। इसमें ३६ बाणीकारों ने समय, स्थान, धार्मिक मत, कर्म, किरत, जात-पात, रंग-नसल के भेदभाव को ध्वस्त करने हेतु आदर्श भूमिका निभाई है। इसमें दुनिया भर के मनुष्यों को परम पिता परमात्मा की सच्ची

भक्ति, नाम-सिमरन और शुभ कर्म करने का संदेश देते हुए सर्वकल्याणकारी सरबत्त के भले का उपदेश दिया गया है।

आज फिर सम्पूर्ण विश्व धर्मों, देशों और राष्ट्रों के नाम पर बुरी तरह से विभक्त हुआ पड़ा है। अलग-अलग धार्मिक फिर्कों के बीच खींचतान व ईर्ष्या-द्वेष की जंग छिड़ गई है। कत्लेआम का दौर चल रहा है। इस दुखदायी घटनायों को रोकने हेतु श्री गुरु ग्रंथ साहिब से सही एवं सार्थक दिशा प्राप्त की जा सकती है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब वो सर्वोत्तम ग्रंथ है, जिसकी रोशनी में ऐसी जीवन-जांच निर्धारित की जा सकती है एवं जिसकी अगुआई में प्रत्येक मामले को ढूंढा जा सक्ता है। इसमें अलग-अलग जातियों, कौमों, नसलों, भूगोलिक क्षेत्रों से सम्बंधित शख्सियतों की बाणी दर्ज होने के कारण इसमें संपूर्ण लोकाई का मार्ग दर्शन करने वाली संभावनाएं स्पष्ट प्रकट हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में प्रत्येक धर्म के साथ संबंधित व्यक्ति को धार्मिक सहनशीलता का उपदेश दिया गया है। ताकि प्रत्येक धर्म से सम्बंधित व्यक्ति अपने धर्म की धार्मिक क्रियाएं स्वतंत्र रूप में कर सके। श्री गुरु नानक देव जी इस में धर्म-परिवर्तन की जगह अपने धर्म में दृढ़ता की बात परिपक्व की है। गुरु जी ने यह भी दृढ़ करवाया कि हिंदू और मुसलमान सहित वो सब लोग मुबारक हैं जो सच की ओर लगे हुए हैं तथा सचियार बनने के लिए प्रयत्नशील हैं :

सभ दुनीआ सुबहानु सचि समाईऐ ॥ (पन्ना १४२)

इसकी बाणी में दर्ज हैं कि सम्पूर्ण लोकाई अलग-अलग फिर्कों, जातियों, नसलों तथा कौमों में विभक्त होने के बावजूद भी परमात्मा का अंश होने के कारण एक ही है :

ना को मेरा दुसमनु रहिआ ना हम किस के बैराई ॥
ब्रहमु पसारु पसारिओ भीतरि सतिगुर ते सोझी पाई ॥२॥
सभु को मीतु हम आपन कीना हम सभना के साजन ॥
दूरि पराइओ मन का बिरहा ता मेलु कीओ मेरै राजन ॥३॥ (पन्ना ६७१)

इस तरह गुरु के लड़ लगे गुरसिक्खों द्वारा की सेवा ने स्पष्ट कर दिया कि गुरु की शिक्षा दुनियावी मनुष्यों को परमात्मा की अंश मानते हुए भेदभाव से ऊपर उठने के लिए प्रेरित करती है :

ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ (पन्ना १२९९)

हमें रसायनिक हथियारों एवं हर प्रकार के प्रकोप से दुनिया को बचाने के लिए बिना किसी विलम्ब के श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की पावन बाणी का संदेश दुनिया के कोने-कोने में पहुंचाने हेतु प्रयत्नशील होना चाहिए। 

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मुक्ति का सिद्धांत

*-डॉ दरशन सिंघ**

मुक्ति का विचार मनुष्य के जितना ही पुराना है, परम पुरातन आदम काल से लेकर अब तक जहां कहीं भी मानवीय सभ्यता के चक्कर-चिन्ह मिलते हैं, मुक्ति के विचार के चक्कर-चिन्ह भी किसी न किसी रूप में उस सभ्यता के लक्षणों में पहचाने गए हैं। इस तरह मुक्ति की समस्या मनुष्य के जितनी ही पुरानी है। यह समस्या धरती पर पैदा हुए मनुष्य के साथ ही जन्मी है (यहां पर साथ जन्म लेने से हमारा इशारा मौलिक प्रारंभिक पाप कर उसके पतन तथा अज्ञानता, तृष्णा, हउमै (अहंकार) करके परमात्मा से पड़े वियोग तथा मनुष्यी बंधन की उत्पत्ति की ओर है) सदैव उसके साथ रही है तथा इसी तथ्य के आधार पर ही कहा जा सकता है कि यह सदैव ही धरती के मनुष्य के साथ रहेगी भी।

अगर मनुष्य से सम्बंधित आत्मा भी अमरता एवं निर्लेपता की धार्मिक परिकल्पना को प्रवान कर लिया जाये तो यह बात भी निश्चित रूप से कही जा सकती है कि मुक्ति की समस्या अस्तित्वमय मनुष्य की समस्या तात्विक मनुष्य की सम्बंधित बंधन की समस्या से जूझना अस्तित्वमय मनुष्य को पड़ता है। तात्विक मनुष्य को नहीं यहां इस तथ्य की ओर इशारा कर देना योग्य जान पड़ता है कि मनुष्यी चेतना के विकास के साथ-साथ मुक्ति के सिद्धांत को नये-नये रूपों में जान गया। इस तथ्य की पुष्टि के लिए मिस्र देश के धर्म में से उदाहरण लिया जा सकता है, उन्होंने कभी नील नदी के पानी को मुक्तिदाता के रूप में समझा और कभी सूर्य देवता को। भारतीय धर्मों में ब्राह्मण धर्म के देवगन में से अलग-अलग देवताओं के बढ़ते-घटते महत्त्व के कारणों को भी मानवीय चेतना के इस सदैवकालीन विकास के इतिहास में ही ढूंढा जा सकता है किंतु मुक्ति के ऐतिहासिक रूपों के विस्तार में जाना यहां हमारा मूल आशय नहीं। उपरोक्त भूमिका के विस्तार में हमारा मूल आशय मानवीय इतिहास में मुक्ति के सिद्धांत के केंद्रीय महत्त्व को स्पष्ट करने से ज्यादा कुछ नहीं। सामी तथा भारतीय धर्मों में स्वर्ग प्राप्ति तथा मुक्ति को मानवीय जीवन का परम उच्च आदर्श स्वीकार्य किया जाना भी मुक्ति के सिद्धांत के केंद्रीय महत्त्व को ही स्पष्ट करता है। धर्मों की इसी परंपरा में आते सिक्ख धर्म में भी मुक्ति के महत्त्व को स्वीकार्य किया गया है। इस सिद्धांत को सिक्ख धर्म में जिस रूप में ग्रहण किया गया है, उसको समझना ही यहां हमारा मौलिक प्रयोजन है।

सिक्ख धर्म के रूप-विधान का सृजन श्री गुरु ग्रंथ साहिब में वर्णित धर्म-विधान पर आधारित है, इस लिए इस लेख में हम श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मुक्ति का सिद्धांत तथा सिक्ख धर्म में मुक्ति का सिद्धांत समान अर्थों में ग्रहण कर के चलेंगे। आगे विस्तार में दोनों का एक-दूसरे के अर्थों में प्रयोग किसी भ्रम का आधार नहीं होना चाहिए।

इसके साथ ही सिक्ख धर्म में स्वीकृत मुक्ति के सिद्धांत को समझने में आने वाली

कठिनाइयों तथा उन कठिनाइयों से निपटने के लिए अपनाई समझ-विधि के बारे में भी यहां ज़िक्र कर देने से हमारी सिद्धांत समझ को और स्पष्टता मिलेगी।

सिक्ख धर्म में स्वीकृत मुक्ति के सिद्धांत को इसके अंतिम रूप में समझना लगभग असंभव है। कारण यह है कि यहां मुक्ति विचार अस्तित्वमय मनुष्य की समस्या होते हुए भी वैज्ञानिक विश्लेषण दृष्टि पर आधारित खंडित प्रकरण को अपनाने की जगह धार्मिक, संयोगात्मक दृष्टि पर आधारित अखंडित या आबंटित प्रकरण को अपनाती है, जो लोक-परलोक का बुनियादी विभाजन करने में विश्वास नहीं करती। इसको और स्पष्ट रूप में इस प्रकार कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक दृष्टि से यह लौकिक जीवन को ही अपने विश्लेषण का आधार मानती है। जबकि धार्मिक दृष्टि लोक-परलोक की व्यापक प्रसंग में विचरते हुए मुक्ति-सिद्धांत की विचार सहज ही परलौकिक के प्रसंग में चली जाती है परंतु इस प्रकरण में मानवीय समझ के साधन-भाषा, संकल्प-प्रबंध, प्रतीक-विधान आदि इसको समझने से असमर्थ होते हैं। इस तरह मुक्ति का सिद्धांत मानवीय समझ क्षेत्र के हदों-पराकाष्ठों से बाहर चला जाता है तथा अपने अंतिम रूप में हमेशा मानवीय समझ की पकड़ से बाहर रहता है। इस मुश्किल से निपटने के लिए तुलनात्मक पहुंच विधि भी हमारी अधिक सहायक सिद्ध नहीं हो सकती तथा न ही हम इसका आश्रय लेंगे। (तुलनात्मक पहुंच विधि से यहां हमारा अभिप्राय किसी सिद्धांत विशेष को कई धर्मों में तुलनात्मक रूप में विचारने से है) उपरोक्त समस्या से जूझने के लिए गुरबाणी की संरचना में ही एक विशेष प्रकार की पहुंच विधि का विकास हुआ है। मुक्त मनुष्य को यह लौकिक प्रकरण में बयान किया हुआ है जिसको जीवन मुक्ति का नाम दिया है। जीवन-मुक्त की प्रकृति का वर्णन संकेतन-विधि द्वारा मुक्ति के सिद्धांत का स्पष्टीकरण करता है। इसके अतिरिक्त मुक्ति के सिद्धांत को निश्चयात्मक रूप में बयान करने के साथ निषेधात्मक रूप में ही विस्तार सहित बयान किया गया है। इस प्रकार के विभिन्न विस्तारों में से मुक्ति के स्वरूप को काफी हद तक समझे जाने की संभावना है। इस विश्लेषण में हम इसी पहुंच विधि के पीछे-पीछे चलने का प्रयत्न करेंगे।

यहां एक और बात भी जो ध्यान देने योग्य यह है कि गुरबाणी में गुरु साहिबान ने अपने अनुभव प्रकटावे के लिए काव्य विधियों तथा काव्य युक्तियों का सहारा लिया है। इस प्रक्रिया में गुरबाणी में आते धर्म-सिद्धांतों का एक तरह से काव्यकरण हुआ मिलता है। उपरोक्त मजबूरी के कारण हम जहां-जहां भी पुष्टि के लिए बाणी की पंक्तियों का प्रयोग किया है, उनके साहित्यक अर्थों के स्थान पर सांकेतिक, सिद्धांतक अर्थों को ही ग्रहण किया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आता मुक्ति का सिद्धांत श्री गुरु ग्रंथ साहिब के संकल्प-प्रबंध के कई दूसरे सिद्धांतों की संक्षेप चर्चा भी साथ ही छेड़नी पड़ेगी। मुक्ति का सिद्धांत बंधन की पूर्व धारणा को साथ लेकर चलता है। अगर यह भी कह लिया जाये कि इसका निर्माण बंधन-सिद्धांत की नींव पर होता है तो ज्यादा भ्रम वाली बात नहीं होगी, बंधन के अस्तित्व के बिना मुक्ति की समस्या को माना ही नहीं जा सकता। गुरमति के अनुसार जीव के बंधन अर्थात् दुख का बुनियादी कारण उसका परमात्मा से वियोग है :

दुखु वेछोड़ा इकु दुखु भूख ॥
इकु दुखु सकतवार जमदूत ॥

हलु दुखु रोगु लगै तनि धाइ ॥
वैद न भोले दारू लाइ ॥१॥ . . .
खसमु विसारि कीए रस भोग ॥
तां तनि उठि खलोए रोग ॥ (पन्ना १२५६)
दुखु तदे जा विसरि जावै ॥
भुख विआपै बहु बिधि धावै ॥ (पन्ना ९८)
कोटि जनम भ्रमि आइआ पिआरे अनिक जोनि दुखु पाइ ॥
साचा साहिबु विसरिआ पिआरे बहुती मिलै सजाइ ॥
(पन्ना ६४०)

चाहे जीव के बंधन का मुख्य कारण परमात्मा से वियोग स्वीकार्य किया गया है किंतु उसके साथ लगते और भी कई कारण हैं जो उसके दुखों के एहसास को तीव्रता, तीक्ष्णता देते हैं। परमात्मा से बिछुड़ने के कारण जीव तृष्णा जाल में फंस जाता है, इसको बाणी में 'भूख' कहकर बयान किया मिलता है। इस भूख की तृप्ति में व्यस्त जीव नित्य नये दुखों को अपने लिए नयौता देता है तथा दुखी होता रहता है। इस 'भूख' को वे कभी भी संतुष्ट नहीं कर सकता क्योंकि इस भूख की प्रकृति ही ऐसी है कि यह हमेशा गुणात्मक विधि के अनुसार बढ़ती रहती है। स्वर्ग के राज्य की प्राप्ति भी इसको तृप्त करने से असमर्थ होती है :

भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार ॥
(पन्ना १)

यह 'रस-भोग' का भोग परमात्मा से वियोग के कारण ही लगता है। ऐसी भूख-तृप्ति के लगन में लगा मनुष्य अपनी वास्तव जीवन-चाल से भटक जाता है। ऐसे लोभ-कर्मों के लिए उसको उत्तरदायी बनना पड़ता है, जिसका अर्थ है, उसका आवागमन-क्रम शुरू हो जाता है। इस तरह उसके दुखों का सिलसिला निरंतर चल पड़ता है। वियोग की अवस्था में जीव अपने 'मूल' को भूल बैठा है तथा हउमै (अहंकार) पूर्ण स्वसीमित लघु अस्तित्व को अपना जीवन-केंद्र मान लेता है। 'कोटि ब्रहमंड को ठाकुरु सुआमी' से उसकी एकसुरता में विघ्न पड़ जाता है, हउमै मनुष्य का संचालन केंद्र बन जाता है। उसका व्यवहार काम, क्रोध आदि पांच विकारों रूपी एजंटों द्वारा चलता है। परमात्मा से लिव टूट जाने का पहला प्रभाव ही यह पड़ता है जीव परमात्मा के हुक्म से टूटकर माया के निज़ाम के वश में पड़ जाता है।

लिव छुड़की लगी त्रिसना माइआ अमरु वरताइआ ॥
एह माइआ जितु हरि विसरै मोहु उपजै भाउ दूजा लाइआ ॥ (पन्ना ९२१)

इस मायावी चक्कर में पड़े जीव के लिए दुख की गट्ठरियां खुल जाती हैं। रस भोगों की भाल में निकले मनुष्य को दुख के अलावा अन्य कुछ नहीं मिलता। दुखों का यह त्रासदमयी चक्कर कर जिसमें रस भोगों सें असंतुष्टता, निराशता, मोह तथा आवागमन के भय आदि मिलते हैं, वे ऐसे है जहां मुक्ति के सिद्धांत के पांव पहचाने जा सकते हैं। मुक्ति-सिद्धांत इसी धरातल पर खड़कर ही यहां से ऊंचा उठता है।

उपरोक्त बयान किए बंधन का स्वरूप मुक्ति का निषेधात्मक पक्ष है। मुक्त अवस्था उपरोक्त वर्णित बंधन तथा बंधन के कारणों से रहित है। इसको और स्पष्ट शब्दों में इस तरह कहा जा सकता है कि मुक्ति बंधन रहित अवस्था है। अगर बंधन परमात्मा से जीव आत्मा का वियोग है तो मुक्ति जीवात्मा के परमात्मा से मिलाप की अवस्था है :

सूरज किरणि मिले जल का जलु हूआ राम ॥
जोती जोति रली संपूरनु थीआ राम ॥
(पन्ना ८४६)

इस अभेदता या मिलाप की अवस्था में बंधन अर्थात् वियोग के दूसरे कारण भी खत्म हो जाते हैं। हउमै अर्थात् आपे की अज्ञानता जो 'धन' तथा 'पिर' के बिछोड़े का बुनियादी कारण होती है, यहां अपनी असलियत को पहचान लेती है अर्थात् मुक्त अवस्था में जीव की हउमै से निवृति हो जाती है। प्रभु मिलाप की अवस्था की पहली शर्त ही यह होती है कि जीव हउमै का त्याग कर देता है :

हउमै जाई ता कंत समाई ॥
तउ कामणि पिआरे नव निधि पाई ॥
(पन्ना ७५०)

खुदी मिटी तब सुख भए मन तन भए अरोग ॥
नानक द्रिसटी आइआ उसतति करनै जोगु ॥
(पन्ना २६०)

भूख तृष्णा की जगह मुक्त अवस्था पर पहुंचा मनुष्य संयम, संतोष, सब्र का धारणी बन जाता है। अल्पज्ञ-पदार्थ सुखों की तृष्णा जलन अब उनको तंग नहीं करती, बल्कि वह उस तरफ से स्वयं को मोड़कर प्रभु पति के पास ले जाने सब्र के मार्ग पर आ जाता है।

खिमा गही ब्रतु सील संतोखं ॥
रोगु न बिआपै ना जम दोखं ॥ (पन्ना २२३)

मुक्ति की अवस्था पर पहुंचे व्यक्ति का सुख के प्रति रवैया ही बदल जाता है। पदार्थक सुख उसके लिए सुख नहीं रहते। अब वह परमात्मा के हुक्म, रज़ा में चलने में ही अपना सुख पहचान लेता है। नाशवान पदार्थों तथा अस्थिर सुखों से उसका रिश्ता टूट जाता है तथा प्रभु चरणों में लगी लिव (लीनता) ही उसके लिए सम्पूर्ण सुखों का सोमा (स्रोत) बन जाती है।

-भाणा मंने सदा सुखु होइ ॥ (पन्ना ३६४)
-तिस का हुकमु बूझि सुखु होइ ॥ (पन्ना २८१)
-कबीर सूखु न एंह जुगि करहि जु बहुतै मीत ॥
जो चितु राखहि एक सिउ ते सुखु पावहि नीत ॥
(पन्ना १३६५)

मुक्त अवस्था की प्राप्ति से जीवात्मा जन्म-मृत्यु के आवागमन के दुखदायी चक्कर से भी बाहर निकल जाती है क्योंकि वह प्रभु चरणों में लिव द्वारा संपूर्ण सुखों के सोमे से जुड़ जाती है।

गुरमुखि हरि हरि हरि लिव लागे ॥
जनम मरण दोऊ दुख भागे ॥ (पन्ना ११७८)

बाणी में गुरु साहिबान ने मुक्त-व्यक्ति के स्वभाव को विस्तार सहित वर्णित किया है। मुक्त-मनुष्य तथा मुक्ति का सम्बंध व्यक्ति तथा व्यक्ति अवस्था का सम्बंध है जिस तरह ऊपर संकेत किया गया है; मुक्त-व्यक्ति के चित्रण की समझ भी मुक्ति के सिद्धांत समझ में सहायी हो सकती है।

मुक्त मनुष्य का चित्रण करते हुए गुरु साहिबान ने उसको दुख-सुख, मान-अपमान उस्तुति-निंदा, हर्ष-सोग, शत्रुता-मित्रता आदि के विरोधी भावों के प्रभावों से निर्लेप एक सहज, अडोल शख्सियत के रूप में पेश किया है जिसके लिए 'रंक राजन' तथा 'कंचन मिट्टी' आदि सब समान मूल्य के धारणी हैं :

सुखु दुखु जिह परसै नही लोभु मोहु अभिमानु ॥
कहु नानक सुनु रे मना सो मूरति भगवान ॥१३॥
उसतति निंदिआ नाहि जिहि कंचन लोह समानि ॥
कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जानि ॥१४॥
(पन्ना १४२७)

ऐसी सहज शख्सियत मुक्ति का जीता-जागता स्वरूप कहा जा सकता है, इसीलिए उसे 'मूर्ति भगवान' कहा गया। ऐसा व्यक्ति द्वैत-भाव से ऊंचा उठकर समदृष्टि का धारणी होता है। गुरबाणी में ऐसे मूर्त व्यक्ति के व्यवहार चित्रण

में ज़िक्र आया है कि उसके समस्त कार्य लोक-कल्याण अर्थात् सरबत्त के भले के लिए होते हैं। उपरोक्त वर्णन से भी हमें मुक्ति को सहज निर्लेपता, समदृष्टि की अवस्था के बारे में पता चलता है किंतु गुरबाणी का मुक्त मंडल का ऐसा वर्णन कोई विभिन्न स्वर्ग नहीं, बल्कि मुक्त-व्यक्ति की विश्व-दृष्टि में सृजित संसार है। मुक्त-व्यक्ति प्रभु से लिवलीनता की अवस्था में स्वयं को ऐसे मंडल में टिका अनुभव करता है। भक्त रविदास जी के गउड़ी राग में उच्चारण किए शबद में इसका बहुत सुंदर चित्रण हुआ मिलता है :

बेगम पुरा सहर को नाउ ॥
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥
नां तसवीस खिराजु न मालु ॥
खउफु न खता न तरसु जवालु ॥
अब मोहि खूब वतन गह पाई ॥
ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ॥ *(पन्ना ३४५)*

उपरोक्त संक्षिप्त विचार के आधार पर हम कह सकते हैं कि सिक्ख धर्म में मुक्ति प्रभु-पति से मिलाप की अवस्था है। इस मिलाप की अवस्था में मुक्त व्यक्ति हउमै धारी तृष्णा पूर्ण, बुरे (मलीन) असरों वाली आवागमन के चक्कर में पड़ी जीवन की अस्तित्व विधि से स्वतंत्र है। दैवी विधान (हुक्म) में अपने मुक्त मनुष्य की मानसिक अवस्था संकीर्णता से मुक्त होकर समदृष्टि वाली हो जाती है। जीवन की हउमैधारी अस्तित्व-विधि वर्तमान विरोधी भावों के जोड़ों के असर से सदैव के लिए ऊंची उठ जाती है। यह प्रभु चरणों की टेक, आसरे (आश्रय) सृजित सहज अडोल अवस्था है।

यहां सिक्ख धर्म के मुक्ति के सिद्धांत से सम्बंधित कुछेक आवश्यक नुक्ते (तरीके) भी विचारणे योग्य लगते हैं।

सिक्ख धर्म में परंपरागत अर्थों में प्रवानित स्वर्ग प्राप्ति को मुक्ति प्रवान नहीं किया गया। निम्नलिखित पंक्ति इसी तथ्य की पुष्टि करती प्रतीत होती है।

सुरग मुकति बैकुंठ सभि बांछहि निति आसा आस करीजै ॥
हरि दरसन के जन मुकति न मांगहि मिलि दरसन त्रिपति मनु धीजै ॥ *(पन्ना १३२४)*

इस सिद्धांत की अप्रवानगी का कारण यह लगता है कि परंपरागत अर्थों में स्वर्ग प्राप्ति जीव के किए शुभ अमलों के फलस्वरूप सुख भोगने की जगह है, जिसकी कोख में आवागमन के बीज छिपे रहते हैं अर्थात् कर्मों का फल भोगने के खत्म होने तथा पुन: जन्म धारण करना पड़ता है। गुरमति में मुक्ति की आशा कर्म-फल-भोग के खत्म होने पर पुन: जन्म धारण करना पड़ता है। गुरमति में मुक्ति की आशा कर्म-फल-भोग के बहाने को अपनी वस्तु प्रवान नहीं करती। इसी कारण ही उपरोक्त पंक्ति में 'आशा' का विरोध किया गया है। गुरमति में मुक्ति निरोल प्रभु-विश्वास, उसके प्रति निष्काम प्रेम तथा उसके साथ मिलाप की लालसा पर आश्रित है।

राजु न चाहउ मुकति न चाहउ मनि प्रीति चरन कमलारे ॥ *(पन्ना ५३४)*

मुक्ति के गुरमति में प्रवानित सिद्धांत के बारे दूसरा ज़रूरी नुक्ता (ढंग) यह है कि यहां भारतीय परंपरा में प्रवानित मुक्ति के कई प्रकारों में से जीवन मुक्ति को प्रवान किया गया है। सिक्ख दर्शन मुक्ति के बारे में ऐसे सिद्धांत में विश्वास नहीं करता जो मृत्यु के पश्चात ही सुरक्षित किया जा सके। सिक्ख दर्शन में यह धारणा दृढ़तापूर्वक रूप में प्रवान की गई है कि अगर यहां मुक्ति प्राप्त नहीं की तो आगे कहीं

नहीं हो सकती :

एथै जाणै सु जाइ सिञाणै ॥ (पन्ना ९५२)

बेणी कहै सुनहु रे भगतहु मरन मुकति किनि पाई ॥ (पन्ना ९३)

मूए हूए जउ मुकति देहुगे मुकति न जानै कोइला ॥
(मलार नामदेव, पन्ना १२९२)

उपरोक्त पंक्तियों से स्पष्ट है कि गुरमति के अनुसार मुक्ति इस जीवन में ही प्राप्त की जा सकती है, इसके बाहर कहीं से भी नहीं। इस सिद्धांत की प्रवानगी का यह भी निष्कर्ष निकलता है कि मुक्ति एक विशेष भांति की जीवन दृष्टि है, जिसको बाणी में वर्णित साधना द्वारा इस लोक में रहते हुए ही प्राप्त किया जा सकता है।

सिक्ख धर्म में मुक्ति के इसी सिद्धांत के कारण आवागमन उतनी देर का ही दुखदायक चक्कर है जितनी देर तक मनुष्य की जीवन गति हउमै के अधीन निर्धारित होती है। जब मनुष्य लिव द्वारा प्रभु चरणों में ध्यान जोड़ने में सफल हो जाता है तो वह अभेदता की अवस्था प्राप्त कर लेता है। इस अवस्था की प्राप्ति के बाद आवागमन उसके लिए दुखदायक नहीं रहता। अब यह प्रारब्द्ध कर्मों के फल भोगने के लिए नहीं बल्कि परमात्मा के हुक्म तथा रज़ा के अनुसार ज़िंदा रहता है। अगर लोक कल्याण के लिए ज़रूरत पड़े तो मुक्त जीव फिर जन्म धारण कर आ सकता है परंतु ऐसा जन्म धारण कर्म-गति या आवागमन के नियमों के अनुसार नहीं उनके निज़ाम से बड़े दैवी इच्छा के निज़ाम के अनुसार लेता है।

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए ॥
जीअ दानु दे भगती लाइनि हरि सिउ लैनि मिलाए ॥ (पन्ना ७४९)

उपरोक्त समस्त विचार को इस तरह समेट सकते हैं कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के मुक्ति के सिद्धांत के अनुसार मुक्ति परमात्मा से मिलाप की अवस्था है। इस अवस्था को सदैवता, संतुष्टता, सहज आदि के अर्थों में ग्रहण किया जा सकता है जहां कि जीवात्मा जीवन में अनुभव किए जाने वाले दुखों से ज्यादा ऊंची उठ सकती है। ऐसी अवस्था शरीर रूप में रहते हुए ही प्राप्त की जा सकती है। जीवन मुक्त व्यक्ति आवागमन के दुखमयी, त्रासद चक्कर से सदैव के लिए बाहर निकल जाता है। उसका जीवन मुक्ति की प्राप्ति के बाद जीवन-मृत्यु सब वाहिगुरु के रहस्यमयी दैवी विधान (हुक्म) के अनुसार होता है, जिसके दुखमयी परिणामों से जीवात्मा सदैव मुक्त रहती है।

अनुवादक : गुरप्रीत सिंघ 'भोमा'





श्री गुरु ग्रंथ साहिब की निर्माण यात्रा

-डॉ हरभजन सिंघ*

संसार के सभी प्रमुख धर्मों के अपने-अपने धर्म ग्रंथ हैं। सभी प्रवर्त्तकों ने यह स्वीकार किया है कि अपनी मान्यताओं को चिरस्थायी रखने के लिए उसे एक लिखित स्वरूप धर्म ग्रंथ के रूप में होना चाहिए।

सभी धर्म ग्रंथ अपने-अपने धर्म को संसार का सर्वश्रेष्ठ धर्म निरूपित करते हैं। कुछ धर्मों में तो यहां तक लिखा गया है कि हमारे धर्मावलंबियों को छोड़कर शेष सभी धर्म के लोग पापी हैं। परंतु श्री गुरु ग्रंथ साहिब एक ऐसा विलक्षण ग्रंथ है, जिसमें धार्मिक कट्टरता कहीं भी दिखलायी नहीं देती। श्री गुरु ग्रंथ साहिब सभी धर्मों एवं संप्रदायों का आदर-सम्मान करते हुए विश्व बंधुत्व और मानवता का उपदेश देता है।

एक पिता एकस के हम बारिक ॥ (पन्ना ६११)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ३६ महापुरुषों की बाणी दर्ज है, जिनमें सिक्ख गुरु साहिबान तथा बारहवीं सदी से लेकर सोलहवीं सदी तक के १५ भक्त जिनकी भाषा और प्रांत अलग-अलग हैं। ये सब गुरु-घर के अनन्य भक्त तथा ग्यारह भट्ट हैं। इन सब की बाणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज है। यह कार्य प्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी के समय से ही आरंभ हो गया था। उन्होंने लगभग उन्नतालिस हज़ार किलोमीटर की यात्रा की होगी। चौबीस वर्षों तक वे भ्रमण करते रहे और अनेक भक्तों, संतों और विद्वानों से मिले। बाणी एकत्र की और श्री गुरु नानक देव जी ने परमात्मा के शब्द को ही गुरु माना है। गुरु जी ने एकत्र की हुई बाणी की पोथी द्वितीय गुरु श्री गुरु अंगद देव जी को सौंप दी। श्री गुरु अंगद देव जी ने बाणी को छोटे-छोटे गुटका साहिब के रूप में प्रकाशित कर संगत में बांटे। श्री गुरु रामदास जी तथा श्री गुरु अरजन देव जी के समय तक यह बाणी अत्यंत लोकप्रिय हो गयी।

श्री गुरु अरजन देव जी ने यह अनुभव किया कि कुछ स्वार्थी लोग इस अमृत बाणी में अपने शब्दों की मिलावट कर रहे हैं, ऐसे में यह पवित्र बाणी अपवित्र हो जायेगी। इस लिए श्री गुरु अरजन देव जी ने विचार-मंथन कर शुद्ध रूप में अमृत बाणी एकत्रित कर इसे ग्रंथ का स्वरूप देने का निश्चय किया। गुरु जी ने भारत भर के अनेक भक्तों की बाणी एकत्रित की और भाई गुरदास जी ने बाणी को लिखने का कार्य किया।

बाणी संगीत के रागों के आधार पर शृंखलाबद्ध लिखी गयी। इसी कारण इसमें कई भक्तों की बाणी अनेक पृष्ठों पर मिलती है। संपूर्ण श्री गुरु ग्रंथ साहिब रागों के आधार पर संगीत बद्ध है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का लेखन कार्य १६०० ई में श्री हरिमंदर साहिब का कार्य पूर्ण होने के पश्चात् आरंभ हुआ। १६०४ ई को इस महान् पावन ग्रंथ का रचना कार्य समाप्त हुआ। श्री गुरु ग्रंथ साहिब को परमेश्वर की पोथी नाम दिया गया। पश्चात् इसे जिल्द-बंदी के लिए भाई बन्नो को दिया गया। वे ग्रंथ साहिब को लेकर लाहौर गए। भाई बन्नो ने इसकी एक और प्रतिलिपि तैयार करवा ली। यह ग्रंथ आज भी विद्यमान है और इसे भाई बन्नो की बीड़ कहा जाता है। पावन गुरु ग्रंथ साहिब को बाबा बुड्ढा जी के शीश पर रखकर श्री दरबार साहिब, श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर

*C/o गुरु नानक वुड वर्क्स, २८ ग्रेट नाग रोड, नागपुर (महाराष्ट्र) फोन: ९३७३२८१९२०

में प्रतिष्ठित किया गया और रास्ते में चंवर साहिब करने की सेवा श्री गुरु अरजन देव जी ने की। श्री हरिमंदर साहिब में प्रात: अमृत वेला में श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश किया जाता। पश्चात् दिन भर कीर्तन का प्रवाह निरंतर चलता रहता है। प्रात:काल श्री गुरु ग्रंथ साहिब से हुक्मनामा (गुरु का आदेश) लिया जाता।

पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी अप्रतिम प्रतिभा के धनी थे। वे स्वयं एक उच्च कोटि के साहित्यकार और सिद्ध पुरुष थे। वे स्वयं ही बाबा बुड्ढा जी तथा भाई गुरदास जी को साथ लेकर कीर्तन करते तथा संगत को आनंदित करते। बाबा बुड्ढा जी को दरबार साहिब के प्रथम ग्रंथी नियुक्त किया गया। इसके साथ ही एक आश्चर्यजनक तथ्य श्री दरबार साहिब के साथ जुड़ा हुआ है। गुरु जी ने दिन-भर कीर्तन करने के लिए छ: रबाबी जत्थे नियुक्त किए। उन जत्थों की गुरबाणी के प्रति अपार श्रद्धा थी। धीरे-धीरे इस स्थान की महिमा फैलने लगी। दूर-दूर से लोग आकर इस पवित्र ग्रंथ के दर्शन करने, सरोवर में स्नान करते, कीर्तन सुनते तथा लंगर प्रसाद लेकर तृप्त हो खुशी-खुशी अपने घर जाते, संध्या समय 'सो दरु' के पाठ के उपरांत श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का सुखासन किया जाता।

श्री गुरु अरजन देव जी की पावन ग्रंथ के प्रति अपार श्रद्धा थी। वे स्वयं सिक्खों के गुरु थे और पूज्य भी थे फिर भी वे रात्रि के समय श्री गुरु ग्रंथ साहिब के समीप फर्श पर सोते थे।

समय-समय पर इस पवित्र ग्रंथ पर अधिकार के लिए संघर्ष भी हुए। दशम पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री गुरु तेग बहादर साहिब जो सिक्खों के नवम् गुरु थे, की बाणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल की। मूल ग्रंथ में तीस रागों में बाणी को संगीत बद्ध किया गया था। नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर जी के राग जैजावंती के सम्मिलित होने से रागों की संख्या इकत्तीस हो गयी।

अंतिम गुरु, महान योद्धा और कवि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जीवन का अंतिम समय नदिड़ (महाराष्ट्र) में व्यतीत हुआ। गोदावरी नदी के तट पर यह एक रमणीक और शांत स्थल है। जीवन का अंत समय जानकर गुरु जी ने अपने सिक्खों को एकत्रित किया। सिक्खों को इस बात की बहुत चिंता होने लगी उनके पश्चात् कौन गुरु होगा? गुरु जी ने संगत की चिंता को समझा और अक्तूबर १७०८ ई को गुरु जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब को माथा टेक कर गुरु आसन पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब को विराजमान कर दिया। गुरु जी इस समय यह शब्द उच्चारित किया--

अकाल पुरख के बचन सिउं
प्रगट चलायो पंथ ॥
सब सिक्खन को हुकम है
गुरू मानिओ ग्रंथ ॥ *(भाई प्रहिलाद जी)*

गुरु जी के इस महान् कार्य से सिक्ख परंपरा में मानवीय गुरु नियुक्त करने की प्रथा समाप्त हो गयी और संपूर्ण विश्व को एक ऐसा अद्वितीय ग्रंथ प्राप्त हुआ जो युगों तक मानव जाति को विश्व बंधुत्व और शांति का संदेश देता रहेगा।

वर्तमान समय में श्री गुरु ग्रंथ साहिब के प्रकाशन का कार्य शिरोमणि गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर द्वारा स्वत: किया जाता है। कमेटी द्वारा एक अति आधुनिक प्रकाशन विभाग बनाया गया है। इसके द्वारा संपूर्ण पवित्रता के साथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पंक्तियां तैयार की जाती हैं। इसके साथ ही विभिन्न प्रकाशकों पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब के प्रकाशन पर प्रतिबंध लगा दिया गया है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब मनुष्य को आत्मिक जीवन के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है और श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शरण में आकर मनुष्य के मन से मैल और द्वेष दूर होता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की स्थिति विलक्षण एवं अद्वितीय है।



बारह माहा माझ म: ५ का उपदेश

-डॉ सुरीत कौर*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में रुती, थिती, सतवारा, दिन रैणि, पहिरे आदि शीर्षकाधीन बाणियां दर्ज हैं। 'बारह माहा' भी इसी प्रकार की एक बाणी है, जिसके द्वारा गुरु साहिब ने अपना उपदेश संगत तक पहुंचाने का माध्यम ढूंढा है। इस तरह के काव्य-रूप उस समय लोगों में आम प्रचलित थे। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दो 'बारह माहा' बाणियां दर्ज हैं, एक तुखारी राग में श्री गुरु नानक देव जी की तथा दूसरी, माझ राग में श्री गुरु अरजन देव जी की। यहां पर हमने माझ राग में रचित श्री गुरु अरजन देव जी की बारह माहा बाणी के बारे में विचार करना है।

श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा रचित यह बाणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पन्ना १३३ से १३६ तक अंकित है। इस लोकप्रिय काव्य-रूप में गुरु साहिब ने मानव-जीवन के बहुत अहम विषय को छुआ है। गुरु साहिब के अनुसार मानव-जीवन का केवल एक ही लक्ष्य है, जिसे स्वयं पंचम पातशाह राग आसा में इस प्रकार बयान करते हैं :

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
(पन्ना ३७८)

जीव आत्मा अपने मूल (परमात्मा) से टूटकर ठीक उसी तरह मुरझायी हुई अनुभव करती है जैसे जल के बिना साख (वनस्पति) मुरझा जाती है और उसे फल नहीं लगता। यह विरह की अवस्था बहुत ही दर्द भरी तथा असहनीय प्रतीत होती है। अन्य किसी को इस दर्द का असली राज़ पता नहीं होता। अज्ञानी मनुष्य तो भटकता ही रहता है। जिस जीव आत्मा को यह ज्ञान हो जाता है वो अपने आप को प्रभु से टूटी हुई होने के कारण विहीन, अधूरी, असमर्थ एवं व्याकुल हुई समझती है और पुन: प्रभु को मिलने के लिए तरसती है। इस मिलन के लिए वो हर संभव प्रयास करती है। प्रभु-मिलन की तड़प बहुत तीव्र हो जाती है जो अपने प्रभु-प्रियतम के आगे अरदास, विनती, प्रार्थना के रूप में प्रकट होती है। इस बाणी की भूमिका में गुरु साहिब जीव आत्मा का प्रभु से वियोग का कारण उसके द्वारा लिए गए पूर्व कर्मों को ही बताते हैं। गुरु साहिब का फरमान है :

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥
(पन्ना १३३)

इस बाणी का सार-तत्व इस छोटी-सी भूमिका में समाया हुआ है। जीव-आत्मा अपने लिए किए गए पूर्व कर्मों के कारण प्रभु से बिछुड़ती है। वो प्रभु-चरणों में पुन: ध्यान जोड़ कर उसकी बख्शिश की पात्र बनकर उसके साथ मिल सकती है और जीवन प्राप्त कर सकती है।

बारह माहा बाणी के आरंभ में दी गई भूमिका के बाद बारह महीनों का वर्णन है। गुरु साहिब ने अपनी अनुपम, अनूठी एवं भावभीनी बाणी में वर्ष भर की बदलती ऋतुओं के द्वारा वियोगिन जीव आत्मा की अपने प्यारे प्रभु से मिलने की इच्छा, उसकी वियोग अवस्था के दर्द, उसके मनोभाव, प्रेम-उमंग तथा मिलन के प्रति संयोग की रसभीनी अवस्था को व्यक्त किया है।

आकार पक्ष से यह बाणी बेशक बहुत बड़ी

*पंजाबी लिट्रेरी स्टडीज़ डिपार्टमेंट, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२

नहीं मगर विषय पक्ष से 'गागर में सागर समाया हुआ है। अपनी वेगमयी एवं प्रभावशाली काव्य-शैली के द्वारा गुरु साहिबान द्वारा धर्म-दर्शन के सारे विषय छुए गए हैं, जैसे कि परमात्मा, जीव आत्मा, जगत, गुरु, कर्म-सिद्धांत, आवागमन, मानव जन्म का उद्देश्य एवं इसकी प्राप्ति के साधन, अहं का त्याग, प्रेमा-भक्ति, नाम-सिमरन, साधसंगत, सेवा, निर्लेपता, बाहरी भेषों का खंडन, अरदास, प्रभु-कृपा आदि। इन सभी विषयों को वर्णन करने के बाद इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि जीव आत्मा प्रभु के सन्मुख होकर, उसकी आज्ञा में चलकर, उसकी कृपा का पात्र बनकर ही प्रभु संयोग प्राप्त कर सकती है, क्योंकि :

परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोग ॥
वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग ॥
(पन्ना १३५)

जीव आत्मा की प्रभु के साथ अभेदता उसके साथ सच्ची प्रीति पाकर ही हो सकती है। ऐसा प्रभु हो :

जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा ॥
(पन्ना १३३)

जिस प्रभु के बिना अन्य कोई सहारा नहीं :

. . . *प्रभ बिनु अवरु न कोइ ॥*
. . . *जिस का निहचल धाम ॥* *(पन्ना १३३)*

जिसके आगे हर कोई झुकता है अर्थात् ऐसा प्रभु जो सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वकला का ज्ञाता है और मेहरबान है, ऐसे प्रभु का सहारा लेकर प्राणी आवागमन के चक्कर से मुक्ति प्राप्त कर सकता है। वो जीव का लोक-परलोक संवारने वाला है। वो मनुष्य की दुखों-क्लेशों से मुक्ति कराकर सदीवी आनंद प्रदान करता है। गुरु जी का विचार है कि सब भ्रम, अदेशे छोड़कर जीव-स्त्री को उस सच्चे प्रभु-प्रियतम का सहारा लेना चाहिए। गुरु साहिब फरमान करते हैं कि केवल उन जीवों का ही संसार में आना सफल है, जिन्होंने इस लक्ष्य को पा लिया हैं :

जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि गणा ॥
(पन्ना १३३)

प्रभु-प्राप्ति का आसान मार्ग नाम-सिमरन बताते हुए प्रभु के आगे गुरु जी याचना करते हैं :

नानक की बेनंतीआ करि किरपा दीजै नामु ॥
(पन्ना १३३)

सच्चे नाम की चिंगारी सब तरह के भ्रम एवं अज्ञान का विनाश करती हुई काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार को जलाकर राख कर देती है और जीव आत्मा को निर्मलता प्रदान करती है। गुरु-फरमान है :

कूड़ गए दुबिधा नसी पूरन सचि भरे ॥
पारब्रहमु प्रभु सेवदे मन अंदरि एकु धरे ॥
(पन्ना १३६)

जिज्ञासु जगत में रहते हुए सत्य-पुरुषों की संगत में सच्चे नाम का भोजन छककर तन-मन में आनंद अनुभव करता है :

तनु मनु मउलिआ राम सिउ संगि साध सहेलड़ीआह ॥ *(पन्ना १३५)*

गुरु साहिब गुरु-उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संसार-त्याग पर ज़ोर नहीं देते बल्कि जीव को आवश्यकता से अधिक मोह, माया, सांसारिकता त्यागने का उपदेश देते हैं। संसार में रहकर अपने गृहस्थ के फर्ज़ निभाते हुए, प्रभु-नाम द्वारा प्रभु-चरणों के साथ जुड़कर, साधसंगत करके तथा निष्काम सेवा द्वारा अपने अहं की मैल धोकर अपने मन अंदर प्रभु-मिलन प्राप्त करने का सच्चा एवं सही मार्ग दर्शाते हैं। प्रभु को जंगलों में जाकर ढूंढने की ज़रूरत नहीं। जीव अपने अंत:करण स्वच्छ करके ही प्रभु का दीदार कर सकता है। इस प्रकार श्री गुरु अरजन देव

जी शुभ गुणों को ग्रहण करने एवं अवगुणों का त्याग करने की शिक्षा देते हैं कि जीव को बड़े अच्छे भाग्य से प्रभु-प्रियतम की प्राप्ति होती है :

जह ते उपजी तह मिली सची प्रीति समाहु ॥
करु गहि लीनी पारब्रहमि बहुड़ि न विछुड़ीआहु ॥
(पन्ना १३५)

गुरु जी ने बारह महीनों के बाद जिज्ञासु को आध्यात्मिक उपदेश देने के बाद अंत में सार तत्व इस प्रकार दिया है कि जिन जीवों ने प्रभु के नाम का सिमरन किया है उन सब जीवों के कार्य सफल हुए हैं। जिन्होंने परमेश्वर की पूर्ण गुरु की कृपा द्वारा आराधना की है वो प्रभु-दरगाह में सच्चे एवं खरे साबित हुए हैं। सारे सुखों की निधि प्रभु के चरण-कमलों की प्रीति है, जिसके सहारे वे इस संसार रूपी भवसागर से पार हो गए हैं। प्रेमा-भक्ति द्वारा जो प्रभु को पा लेते हैं उनके सब पाप नष्ट हो जाते हैं, उनकी दुविधा खत्म हो जाती है तथा उनके अंदर पूर्ण (परमात्मा) निवास करने लगता है।

गुरु जी का आगे फरमान है कि वो हर महीना, हर दिन भला है जिसमें परमात्मा किसी जीव-स्त्री पर कृपा की निगाह रखे। जीव-स्त्री को ऐसे मेहरबान प्रभु के दर्शन की ही अभिलाषा होनी चाहिए और उसके आगे ही अरदास करनी चाहिए। इस प्रकार प्रेमा-भक्ति तथा सच्ची लगाव से जीव आत्मा अविनाशी पुरख को प्राप्त कर सुहागिन का रुतबा पाती है और उसमें सदा के लिए समा जाती है। यह अवस्था सदीवी आनंद की अवस्था होती है, जिसमें तत्व परम-तत्व में मिलकर अभेद हो जाता है और जीव आवागमन के चक्कर से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। इस अवस्था में आकर 'तू' और 'मैं' का अंतर समाप्त हो जाता है; वैराग्य आनंद का रूप धारण करता है और मन तृप्त एवं शांत हो जाता है :

जिनि जिनि नामु धिआइआ तिन के काज सरे ॥
हरि गुरु पूरा आराधिआ दरगह सचि खरे ॥
सरब सुखा निधि चरण हरि भउजलु बिखमु तरे ॥
प्रेम भगति तिन पाईआ बिखिआ नाहि जरे ॥
कूड़ गए दुबिधा नसी पूरन सचि भरे ॥
पारब्रहमु प्रभु सेवदे मन अंदरि एकु धरे ॥
माह दिवस मूरत भले जिस कउ नदरि करे ॥
नानकु मंगै दरस दानु किरपा करहु हरे ॥
(पन्ना १३६)

कविता

एकता, ममता का पाठ पढ़ाएं

धर्म जाति भाषा के भेद मिटाएं।
सबको एकता, ममता का पाठ पढ़ाएं।
सबसे मिल-जुल कर रहें, स्नेह की सरिता बहाएं।
सबको स्नेह सद्‌भाव की माला में पिरोएं।
सबमें नयी आशा, विश्वास, स्नेह जगाएं।
समाज से भेदभाव, ऊंच-नीच, शोषण।
अन्याय, अनीति, अत्याचार मिटाएं।
सुख शांति से रहे व दूसरों को रहने दें।
जिओ और जीने दो का पाठ पढ़ाएं।

-सुरेंद्र कुमार अग्रवाल, अग्रवाल न्यूज ऐजेन्सी हटा दमोह म प्र ४७००७५

सर्वकल्याणकारी है प्रभु का नाम-सुमिरन

*-डॉ मीना रानी शर्मा**

आज मनुष्य अपने जीवन और दिनचर्या में इतना उलझा हुआ है कि उसके पास अपने सृजनकर्ता के नाम को जपने के लिए समय ही नहीं है। वह रातों-रात अमीर होने के लिए तरह-तरह के हथकंडों का प्रयोग करता है। भौतिक पदार्थों के प्रति उसका प्रेम उसे अपने ही अस्तित्व से दूर कर रहा है। परमात्मा ने उसे मनुष्य बनाकर धरती पर क्यों भेजा है? उसका क्या कर्त्तव्य है? इन बातों से वह नितांत अनभिज्ञ है। 'नाम' से बेमुख हुआ जीव अपने लक्ष्य से भटका हुआ, नाशवान वस्तुओं को संग्रहित करने में ही जुटा रहता है तथा अपने अमूल्य मनुष्येत्तर जन्म को व्यर्थ ही गंवा रहा है।

ऐसे पथभ्रष्ट जीवों के कल्याण के लिए हमारे गुरु साहिबान ने बाणी की रचना की जो श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित है। गुरबाणी में भटके हुए जीवों को सीधे रास्ते पर लाने के लिए 'नाम-सुमिरन' पर बल दिया गया है। 'नाम-सुमिरन' के लिए मनुष्य को किसी विशेष समय या अवधि की आवश्यकता नहीं अपितु कहीं भी, किसी भी समय वह नाम-सुमिरन कर सकता है:

उठंदिआ बहंदिआ सवंदिआ सुखु सोइ ॥
नानक नामि सलाहिऐ मनु तनु सीतलु होइ ॥
(पन्ना ३२१)

ईश्वर का खजाना भरपूर है। उसमें से सब सुखों की प्राप्ति की जा सकती है। परमात्मा चूंकि सर्वकला भरपूर है; इसलिए मनवांछित फल देने में समर्थ है। वही हमारा पिता और माता है:

अबिचल नगरु गोबिंद गुरू का नामु जपत सुखु पाइआ राम ॥
मन इछे सेई फल पाए करतै आपि वसाइआ राम ॥
करतै आपि वसाइआ सरब सुख पाइअत पुत भाई सिख बिगासे ॥
गुण गावहि पूरन परमेसुर कारजु आइआ रासे ॥
प्रभु आपि सुआमी आपे रखा आपि पिता आपि माइआ ॥ (पन्ना ७८३)

नाम-सुमिरन से व्याधियों का नाश होता है। सब प्रकार के अनावश्यक मोह-बंधनों से सर्वदा निवृत्ति मिल जाती है। ईश्वर का नाम हर स्थान पर हमारी रक्षा करने वाला है। जो मनुष्य दृढ़ इरादे और दृढ़ संकल्प से नाम-सुमिरन करता है, वह दुनिया के भवसागर को नाम-सुमिरन का सहारा लेकर पार उतर सकता है:

सिमरउ सिमरि सिमरि सुख पावउ सासि सासि समाले ॥
इह लोकि परलोकि संगि सहाई जत कत मोहि रखवाले ॥
गुर का बचनु बसै जीअ नाले ॥
जलि नही डूबै तसकरु नही लेवै भाहि न साकै जाले ॥ (पन्ना ६७९)

ईश्वर अपने भक्तों का संरक्षक बनकर पालन-पोषण करता है, उन्हें उनकी आवश्यकतानुसार

**प्रवक्ता, हिंदी विभाग, यूनिवर्सिटी कॉलेज, नेबरहुड कैंपस, रामपुरा फूल (बठिंडा)*

प्रत्येक वस्तु उपलब्ध कराता है :

निरधन कउ धनु अंधुले कउ टिक मात दूधु जैसे बाले ॥
सागर महि बोहिथु पाइओ हरि नानक करी क्रिपा किरपाले ॥ (पन्ना ६७९)

'नाम' ही समस्त पाप-कर्मों से छुटकारा दिलाने वाला है। उसके तुल्य कोई तीर्थ नहीं, कोई स्नान नहीं, कोई व्रत नहीं। दुनिया में आकर मनुष्य चाहे कितने ही बड़े-बड़े कार्य क्यों न करता रहे अगर वह 'नाम' का सुमिरन नहीं करता तो उसका सारा श्रम और जीवन निष्फल है। वह आवागमन के चक्कर में भटकता हुआ रह जाएगा, जबकि नाम-सुमिरन ऐसे जन्म-मरण के चक्करों से मुक्ति दिलाने वाला है। 'नाम' से महा आनंद की प्राप्ति होती है और चित्त सहजावस्था को प्राप्त होता है। 'नाम' ही सब सुखों और वैभवों का सार है। इससे मोह, लोभ, अहंकार, काम और क्रोध जैसे महाविकारों का नाश हो जाता है। इसलिए जीव के लिए नाम-सुमिरन अति अनिवार्य है:

सिमरन राम को इकु नाम ॥
कलमल दगध होहि खिन अंतरि कोटि दान इसनान ॥
आन जंजार ब्रिथा स्रमु घालत बिनु हरि फोकट गिआन ॥
जनम मरन संकट ते छूटै जगदीस भजन सुख धिआन ॥ (पन्ना १२२१)

परमात्मा रूपी गुणों के कोष को एक गुरमुख व्यक्ति ही प्राप्त करने के लायक है। निरंतर तन्मयता से परमात्मा की प्राप्ति होती है। वह हर समय सब के अन्त:करण में परमात्मा के दर्शन करता है और उसकी जिह्वा हर समय नाम ही नाम उच्चारण करती है। परमात्मा के चरण-कमलों से चित्त जोड़ने से ही जीव का कल्याण संभव है। उसी से जीवन-नैय्या भवसागर से पार उतरेगी अन्यथा भंवर में ही गोते लगाती रह जाएगी। नाम के अलावा कोई अन्य नहीं जो जीवन रूपी नैय्या को संसार रूपी भवसागर से पार लगा सके। नाम-सुमिरन से भटकते और विचलित हुए मन को शांति मिलती है, जहालत का अंधेरा दूर हो जाता है तथा सभी तामसी प्रवृत्तियों से भी छुटकारा मिलता है:

साचे मैलु न लागई मनु निरमलु हरि धिआइ ॥
गुरमुखि सबदु पछाणीऐ हरि अंम्रित नामि समाइ ॥
गुर गिआनु प्रचंडु बलाइआ अगिआनु अंधेरा जाइ ॥
मनमुख मैले मलु भरे हउमै त्रिसना विकारु ॥
बिनु सबदै मैलु न उतरै मरि जंमहि होइ खुआरु ॥ (पन्ना २९)

नाम-प्राप्ति का साधन जप, तप, व्रत, अर्चना या मात्र धार्मिक पुस्तकों का पढ़ना नहीं है। ईश्वर का भेद पाना संभव नहीं। हमें केवल प्रभु नाम के सुमिरन को ही दृढ़ करना चाहिए। नाम-सुमिरन मन की तन्मयता, आत्मीयता तथा कीर्तन से होता है, इसलिए मनुष्य को संतों की संगत करनी चाहिए। जहां सतसंगत है वहां परमात्मा आप है। भक्त ध्रुव, भक्त प्रहिलाद, भक्त नामदेव जी और भक्त पीपा जी इत्यादि भक्तों को ईश्वर की प्राप्ति मन की तन्मयता और प्रभु-प्रेम से हुई है। ईश्वर के नाम की गति कही नहीं जा सकती:

हरि के नाम की गति ठांढी ॥
बेद पुरान सिम्रिति साधू जन खोजत खोजत काढी ॥
सिव बिरंचि अरु इंद्र लोक ता महि जलतौ फिरिआ ॥
सिमरि सिमरि सुआमी भए सीतल दूखु दरदु भ्रमु

हिरिआ ॥ *(पन्ना १२१९)*

प्रभु-नाम पतित उद्धारन है। अजामल, गणिका, शुक इत्यादि सब का कल्याण प्रभु-नाम से ही हुआ है। जब विपत्ति के समय सारे रिश्ते-नाते साथ छोड़ जाते हैं, तब प्रभु-नाम ही व्यक्ति का संरक्षक और आधार बनता है। ईश्वर का नाम-सुमिरन करने वाले व्यक्ति के सारे अवगुण ढंके जाते हैं और वह निमाणा होकर भी कीर्ति का पात्र बनता है:

हरि को नामु सदा सुखदाई ॥
जा कउ सिमरि अजामलु उधरिओ गनिका हू गति पाई ॥
पंचाली कउ राज सभा महि राम नाम सुधि आई ॥
ता को दूखु हरिओ करुणा मै अपनी पैज बढाई ॥
(पन्ना १००८)

प्रभु-नाम के सुमिरन से केवल प्रभु का नाम-सुमिरन करने वाले व्यक्ति का ही नहीं अपितु उससे संबंधित लोगों का भी उद्धार होता है। ऐसे करुणामय ईश्वर को कभी नहीं भुलाना चाहिए। जीवन के लिए वांछित सभी सामग्री देने वाला परमात्मा है। वह गरीब, अमीर, छोटे-बड़े सब के लिए जीने के साधन जुटाता है। प्रभु दातार है, सब कुछ देने वाला है, बशर्ते कि हमें उससे मांगने का ढंग आना चाहिए। प्रभु से मांगना है तो नाम-दान मांगो, जो हलत-पलत में सहाई होता है:

जाचक जनु जाचै प्रभ दानु ॥
करि किरपा देवहु हरि नामु ॥
साध जना की मागउ धूरि ॥
पारब्रहम मेरी सरधा पूरि ॥
सदा सदा प्रभ के गुन गावउ ॥
सासि सासि प्रभ तुमहि धिआवउ ॥
चरन कमल सिउ लागै प्रीति ॥
भगति करउ प्रभ की नित नीति ॥
एक ओट एको आधारु ॥
नानकु मागै नामु प्रभ सारु ॥
(पन्ना २८९)

'नाम' इतना पावन है कि उससे मनुष्य अपने युगों-युगों से भटकते पितरों का भी भला कर सकता है। बच्चे के जन्म से ही माता-पिता को चाहिए कि वे उसे आशीर्वाद में नाम-सुमिरन की दात दें जिससे बच्चे का और उसका स्वयंत्व और शेष परिवार भी संवर सके तथा वे कभी भी ईश्वर से बेमुख न हो सकें:

जिसु सिमरत सभि किलविख नासहि पितरी होइ उधारो ॥
सो हरि हरि तुम्ह सद ही जापहु जा का अंतु न पारो ॥
पूता माता की आसीस ॥
निमख न बिसरउ तुम्ह कउ हरि हरि सदा भजहु जगदीस ॥ *(पन्ना ४९६)*

दूसरी ओर परमात्मा के नाम का सुमिरन न करने वाला परमात्मा से बेमुख रहता है। उसे ख्वार होने के बिना और कुछ भी प्राप्त नहीं होता। वर्तमान समय में जब मनुष्य ही मनुष्य का दुश्मन है, जहां प्रत्येक बड़ी मछली छोटी को निगल लेने को लालायित है, ऐसे में केवल प्रभु-नाम ही हमारा आधार है। उसके आश्रय के बिना सब अन्य सांसारिक सहारे झूठे और निरर्थक हैं:

कलजुग महि राम नामु उर धारु ॥ बिनु नावै माथै पावै छारु ॥
राम नामु दुलभु है भाई ॥ गुर परसादि वसै मनि आई ॥ *(पन्ना ११२९)*

मनुष्य-जीवन बहुत छोटा है, निसदिन आयु में कटौती होती है। अपने मूल्यवान समय को संभालते हुए मानव को 'नाम' से जुड़ना

चाहिए। इन सांसों का क्या भरोसा, कब इनका आना-जाना थम जाए!

चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी ॥
छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी॥
हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना ॥
झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना ॥
(पन्ना ७२६)

परमात्मा को पाने के लिए प्रभु-नाम सुमिरन को छोड़ कर अन्य तरह-तरह के जप, तप, व्रत इत्यादि साधन उपयुक्त नहीं हैं। इनका मार्ग अति दुर्गम है। दूसरी ओर सुमिरन का पथ इतना सरल और सुगम है कि हर व्यक्ति इस पर आसानी से चल सकता है। 'नाम' आत्मा और परमात्मा के मिलाप का नाम है। परमात्मा को सर्वस्व सौंपने वाले व्यक्ति की हर ज़रूरत स्वत: ही पूरी होती है। 'नाम-सुमिरन' यूं तो श्वास-श्वास चलना चाहिए क्योंकि इस परमात्मा को एक पल भुलाना भी उचित नहीं है। फिर भी ऐसा कहना उचित ही है कि परमात्मा के साथ जुड़ने के लिए अमृत समय अधिक उपयोगी व अनुकूल है। अत: मनुष्य को प्रात: काल उठकर 'नाम-सुमिरन' में मन लगाना चाहिए:

झालाघे उठि नामु जपि निसि बासुर आराधि ॥
कार्हा तुझै न बिआपई नानक मिटै उपाधि ॥
(पन्ना २५५)

प्रभु सब के दिलों की जानने वाला है। मनुष्य को संसार में कुछ मांगने के लिए दूसरों के सामने हाथ पसारने पड़ते हैं, किन्तु 'नाम-सुमिरन' से, बिन मांगे सब कुछ मिल जाता है। भक्त रविदास जी और भक्त नामदेव जी जैसे प्रभु के नाम-सुमिरन में पूर्णत: जुड़े भक्तों के उदाहरण हमारे समक्ष हैं। परमात्मा का नाम नरक की यातनाओं से बचाने वाला है:

नामु हमारै अंतरजामी ॥
नामु हमारै आवै कामी ॥
रोमि रोमि रविआ हरि नामु ॥
सतिगुर पूरै कीनो दानु ॥
नामु रतनु मेरै भंडार ॥
अगम अमोला अपर अपार ॥ (पन्ना ११४४)

मनुष्य को श्वास-श्वास सुमिरन करना चाहिए। जिसकी हर सांस पर प्रभु-नाम की मोहर लगती है सच मानो, उसने ही मानव जीवन की सच्ची कमाई कर ली है। परमात्मा ऐसे व्यक्ति की उसके दुश्मनों से रक्षा करते हुए सदा उसके अंग-संग रहता है। वह समयानुसार भक्तों की रक्षा करने के लिए सदैव तैयार रहता है। इसलिए गुरु-फरमान है:

नित जपीऐ सासि गिरासि नाउ परवदिगार दा ॥
जिस नो करे रहंम तिसु न विसारदा ॥ . . .
अनिक रूप खिन माहि कुदरति धारदा ॥
जिस नो लाइ सचि तिसहि उधारदा ॥
जिस दै होवै वलि सु कदे न हारदा ॥
सदा अभगु दीबाणु है हउ तिसु नमसकारदा ॥
(पन्ना ५१८-१९)

जो परमात्मा माता के गर्भ में ही हमारा लालन-पालन करने वाला है, उसका नाम तो जिह्वा को हर समय रटते रहना चाहिए। मोह का परित्याग करके ईश्वर से चित्त और आत्मा को जोड़ना चाहिए। 'राम-नाम' ही हमारे जीवन की अमूल्य निधि है। दुनिया के समस्त खज़ाने 'प्रभु-नाम' में ही निहित हैं। इस कोष को हम जितना खींचेगें, यह उतना ही बढ़ेगा। इसलिए हमें जिह्वा को हमेशा हरि-नाम के रस का स्वाद चखाना चाहिए:

रसना जपती तूही तूही ॥

(शेष पृष्ठ २९ पर)

धंनु नानक तेरी वडी कमाई

-डॉ गुरबख्श सिंघ 'वाशिंगटन'*

लगभग दस वर्ष पूर्व एक अंतर्धर्म (Inter Faith) गोष्टि कलीवलेंड, ओहाइओ, यू.एस. में हुई ईसाई, इस्लाम, हिंदू, सिक्ख धर्म के स्थानीय नुमाइंदों के अतिरिक्त पूरब देशों के धर्म शिंटोइज़म और टाउइज़म धर्म को मानने वालों ने भी उसमें भाग लिया।

प्रत्येक धर्म के प्रचारकों ने अपने धर्म के प्रति बातें बताईं। सभी वक्ता प्रसन्न थे कि वे अपने धर्म के बारे में अन्य धर्मों के लोगों को अच्छी जानकारी दे रहे थे। जब प्रश्न पूछने के लिए कहा गया तो एक श्रोता ने सभी वक्ता गण से एक प्रश्न पूछा, "मैं जानना चाहता हूं कि जो मनुष्य आपके धर्म को नहीं मानते क्या वे आपके साथ स्वर्ग में जा सकेंगे या वे सब नरकों में जायेंगे?"

ऐसा प्रश्न धर्मों की सांझी एकत्रता में नहीं पूछा जाना चाहिए था। सभी धर्मों के प्रचारकों की ओर से यह प्राय ही प्रचारा जाता है कि जो उनके धर्म में नहीं, उनके लिए आगे स्वर्ग में कोई स्थान नहीं परंतु धर्मों के सामूहिक इकट्ठ में यह कहना अत्यंत कठिन बन जाता है कि यदि आप मेरे धर्म को मानेंगे तभी आप स्वर्ग को प्राप्त कर सकेंगे, नहीं तो सदैव के लिए नरक की अग्नि में जलते रहेंगे। इसलिए सभी धर्मों वालों के उत्तर गोल-मोल एवं टालने वाले थे, श्रोता गण को वक्ता गण की स्पष्ट उत्तर देने से कठिनाई भलीभांति समझ में आती थी।

आखिरी बारी सिक्ख की थी। जो उत्तर लेखक ने दिया वह सभी ने ध्यान से सुना और तालियां बजाकर स्वीकार किया। यह उत्तर इस प्रकार था :

मैं प्रश्न पूछने वाले भाई को बधाई देता हूं जिसने इस एकत्रता में ऐसा प्रश्न पूछने का साहस किया है। मुझे यह बताने में हर्ष है कि सिक्ख धर्म के अनुसार यह प्रश्न बनता ही नहीं है कि अन्य धर्म वालों का आगे जाकर क्या बनेगा? सभी मनुष्यों का धर्म एक ही है-- परमात्मा से प्यार करना। परमात्मा का कोई भी नाम लेकर तथा जैसे भी कोई करता है, वही ठीक है।

सिक्ख धर्म के संस्थापक श्री गुरु नानक साहिब सुलतानपुर लोधी में साथ बहती बेईं नदी में स्नान करने जाते थे। एक दिन वे वापिस न आये; तीसरे दिन जब वह नदी से बाहर आए तो उन्होंने 'न कोई हिंदू न मुसलमान' का नारा लगाया। जब लोगों ने गुरु नानक साहिब से पूछा, "आप कहां गए थे? हमने यह समझा कि आप शायद कहीं दरिया में लुप्त हो गए हों।

गुरु जी ने उत्तर दिया, "मुझे भगवान ने बुलाकर बतलाया है कि हम सभी का पिता एक प्रभु स्वयं ही है। सभी उसके बच्चे होने के कारण हम सभी भाई-भाई हैं। इस प्रकार गुरु जी ने सबको समझाया कि मनुष्यों को हिंदू, मुसलमान या अन्य धर्मों में बांटना ठीक नहीं, सभी एक समान इन्सान हैं, सभी को उस ईश्वर ने पैदा किया हुआ है।

इस सिद्धांत को प्रचारने के लिए श्री गुरु नानक साहिब हिंदुओं और मुसलमानों के प्रमुख

स्थानों पर गए। वे मक्का, मदीना में भी पहुंचे। सभी जगह यही संदेश दिया कि मनुष्यों को धर्मों में न विभाजन करें, सभी का पिता एक है, इसलिए सभी इन्सान भाई-भाई हैं।

जो भी कोई नाम किसी को प्रिय लगता है, उसी नाम से वह परमात्मा को याद करता है। मानवता को प्यार करना ही धर्म है। अपनी भाषा और संस्कृति के अनुसार उसको अल्लाह, राम, कृष्ण, गुरु या किसी भी अन्य नाम से याद किया जा सकता है। नाम अलग लेने से धर्म अलग नहीं हो जाते। जैसे बच्चे अपने पिता को डैडी, पापा, बापू आदि अलग-अलग नामों से बुलाते हैं परंतु रिश्ता तो पिता वाला एक ही है, वैसे ही परमात्मा को हम भाषानुसार अलग-अलग नामों से प्यार करते हैं लेकिन परमात्मा से रिश्ता (धर्म) एक ही करता पुरख (Creator) वाला ही है।

श्री गुरु नानक साहिब ने इस सिद्धांत को जन साधारण तक पहुंचाने हेतु दो नई संस्थाएं संगत और पंगत का प्रारंभ किया। संगत रूप में हिंदू, मुसलमान,दानी-निर्धन, स्त्री-पुरुष ऊंच-नीच जाति के लोग सभी समान बैठ कर एक-दूसरे को भाई-बहन मानकर सांझे पिता परमात्मा के गुण गाने लगे। पंगत में इसी प्रकार सभी एक समान बिना भेदभाव के इकट्ठे लंगर छकते। उन्होंने धर्म,जाति तथा अन्य भेद मिटाकर मनुष्यों को सांझे पिता के साथ प्यार करना ही एक धर्म बतलाया।

श्री गुरु नानक साहिब ने यह सत्य प्रकट किया एक किसी विशेष धर्म या जाति वाले की परमात्मा व्यक्तिगत संपत्ति नहीं है कि केवल वो उसके ही मालिक हैं। प्रत्येक मनुष्य परमात्मा को प्यार करने का अधिकार रखता है और उसको मिल सकता है।

सिक्ख धर्म के ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब में छः गुरु साहिबान की बाणी के साथ ही पंद्रह भक्तों की बाणी भी शामिल है। इनके अतिरिक्त अन्य जाति-पाति ऊंच-नीच के भेदभाव के बिना भट्टों, गुरसिक्ख आदि की बाणी भी शामिल है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अल्हा, राम, गोबिंद, हरी, गुरु इत्यादि उस समय के प्रचलित सभी नामों से परमात्मा को याद किया गया है और उपमा की गई है। सिक्ख धर्मानुसार प्रत्येक मनुष्य को अपने परम पिता परमात्मा से मिलने का समान अधिकार है जैसे प्रत्येक बच्चे का अपने पिता को अपनी इच्छानुसार प्यार करने और उसको मिलने का समान अधिकार है।

यह बात सुनते ही सभी श्रोता गण की तालियों से सारा हाल गूंजने लग गया। सभी को ये विचार अच्छे और ठीक लगे थे। मेरे कान तालियां सुन रहे थे, आंखें श्रोता गण के प्रसन्न चेहरे देख रही थीं, जो बतला रहे थे कि यही सही उत्तर है जो सब धर्मों वालों को स्वीकार है। मेरा मन कह रहा था--

धनु नानक तेरी वडी कमाई।

पुस्तकों में तो पढ़ा था कि श्री गुरु नानक साहिब का सत्कार सभी लोग नानक शाह फकीर, हिंदुओं का गुरु, मुसलमानों का पीर कहकर करते थे। उस दिन पूरब तथा पश्चिम से आए लोगों को प्रसन्न चेहरों से पढ़ा जाता था :

जगत गुरु, श्री गुरु नानक साहिब

उस समय के वातावर्ण से दीख पड़ता था कि हाल में उपस्थित विद्वान लोगों ने तो गुरमति का बड़प्पन स्वीकार कर लिया है, आगे को यह 'नित नित चड़ै संवाई' के सिद्धांतानुसार और बढ़ेगी। यहां से शांति की हवा हिंदुस्तान में भी पहुंचेगी जहां हिंदू, सिक्ख, मुसलमान विरोध के

अतिरिक्त सिक्ख-सिक्ख का विरोध भी पंथ में दूरियां डाल रहा है। कारण एक ही है-- लोभ। इसी लिए कहा है :

लोभी का वेसाहु न कीजै . . ॥ (पन्ना १४१७)

जिस समय सभी लोग तालियां बजा रहे थे, प्रश्न पूछने वाला भाई सोच-विचार में डूबा हुआ दिखाई दे रहा था। तालियां समाप्त होते ही उसने एक और प्रश्न पूछा, "आपने कहा है कि जो भी मनुष्य परमात्मा को सबका पिता मानता है और उसको किसी भी नाम से प्यार करता है वह परमात्मा को प्राप्त कर लेता है। यह तो सबने उपयुक्त मान लिया है। लेकिन जो लोग-परमात्मा को नहीं मानते उनके बारे में क्या कहते हो? वो तो कहते हैं कि परमात्मा है ही नहीं!

मेरा उत्तर इस प्रकार था :

इस प्रश्न के बारे में गुरमति विचार अपने बच्चों की उदाहरण देकर समझा सकता हूं। मेरा लड़का हिंदुस्तान में है। वहां बिगड़े हालात होने के कारण हम एक-दूसरे को मिल नहीं सके और मिलने की अभी कोई उम्मीद भी नहीं है। यदि मेरा लड़का यह कहे कि उसका पिता है ही नहीं तो मुझे पता है कि वह झूठ नहीं बोलता वह सच कह रहा है चूंकि उसका उसके पिता से मिलाप नहीं हो सका। मेरी लड़की यहां अमेरिका में है जिसके पास मैं रहता हूं। उसे पता है कि मेरा एक लड़का हिंदुस्तान में है जो मुझे न मिल सकने के कारण पिता का होना ही नहीं मानता। चूंकि मेरी लड़की को यह पता है कि मेरा लड़का उसका भाई है इसलिए वह दोनों वक्त अरदास (प्रार्थना) में यह याचना करती है कि, "हे वाहिगुरु, मेरे भाई पर कृपा करना और उसे कुशल पूर्वक रखना।" ऐसे ही हम सिक्खों को यह बतलाया गया है कि सभी मनुष्य परमात्मा के ही बच्चे हैं, इसलिए सभी ही हमारे भाई बहन है चाहे वो परमात्मा को मानते हों चाहे न मानते हों। सिक्खों को श्री गुरु नानक साहिब ने इसलिए हुक्म किया है कि तुम्हारी की हुई प्रार्थना परमात्मा तभी पूरी तरह से समझेगा जब तुम यह कहोगे :

नानक नाम चढ़दी कला,
तेरे भाणे सरबत्त दा भला।

इस प्रकार प्रत्येक सिक्ख अपने धर्म के हुक्मानुसार दोनों वक्त परमात्मा के पास यह उक्त प्रार्थना करता है।

यह सुनते ही सभी श्रोता गण खड़े होकर तालियां बजाने लगे। पाश्चात्य (Western) देश इसको Standing Ovation कहते हैं। किसी को सबसे अधिक मानने तथा सत्कार करने का यह सबसे ऊंचा पाश्चात्य ढंग है। सभी श्रोता गण को खड़े होकर तालियां बजाते देख-सुनकर हृदय में से यह प्रार्थना निकली कि हे वाहिगुरु! आप दास को गुरु नानक के घर (सिक्ख परिवार में) जन्म देकर निवाज़ा है, आप जी ने सिक्खी जीवन प्रदान करके यह जीवन सफल करना जी। 



स्त्री के सम्मान में सिक्ख गुरु साहिबान का योगदान

-डॉ तेजिंदर कौर*

सिक्ख धर्म मनुष्य को जीवन से जोड़ता है और सिक्ख अपने जीवन द्वारा धर्म को जोड़ता है। अगर किसी धर्म या फलसफे को मानव जीवन से अलग कर दिया जाए तो वह धर्म अथवा विचारधारा सफलतापूर्वक विकास नहीं कर सकते। गुरबाणी का मुख्य विषय-वस्तु चाहे आध्यात्मिक अथवा परमार्थक है परंतु गुरु साहिबान ने अपने समय के समाज में फैली गैर-मानवीय कुरीतियों और व्यवहार के विरुद्ध जोशपूर्ण आवाज़ उठाई तथा संघर्ष किया। समाज के वातावर्ण को सुखमय और सुंदर बनाने के लिए तथा बढ़िया पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन व्यतीत करने के लिए दिशाएं दीं क्योंकि मनुष्य के आत्मिक विकास के लिए सुखमय जीवन बहुत जरूरी है। एक तंदरुस्त (स्वस्थ) समाज की स्थापना हेतु गुरु साहिबान ने मनुष्य को सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक रूप में सुचेत होने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि स्त्री वर्ग जो समाज का आधा अंग है अगर उसको समाज में अच्छा स्थान प्राप्त नहीं या उसका समाज के विकास में कोई योगदान नहीं है तो समाज कैसे प्रफुलित हो सकता है?

गुरु साहिबान ने स्त्रियों की मुक्ति, समानता एवं शक्ति सम्बंधी विचार पेश किए हैं। गुरबाणी अध्ययन से पता चलता है कि गुरु साहिबान स्त्रियों को समानता का दर्ज़ा देने के पक्ष में हैं। इसका अर्थ है कि उन्होंने समाज में स्त्रियों पर हो रहे अत्याचार, मानसिक दबाव और दमन को नकारा तथा उनको अलग-अलग क्षेत्रों में प्रकट करने के मौके दिए ताकि वह पुरुष की तरह सम्मान भरी ज़िंदगी व्यतीत कर सके। माता खीवी जी और माता भागो जी सिक्ख इतिहास में ऐसी प्रमुख्य शख़्सियत हैं, जिनको गुरु साहिबान द्वारा प्रचारित स्त्री स्वाभिमान का प्रतीक माना जा सकता है। माता खीवी जी का नाम लंगर में सेवा करने के रूप में श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज किया। माता भागो जी ने सिक्खी सिद्धांतों को प्रकट करते हुए श्री अनंदपुर साहिब से बेदावा दे गए सिंघों को गुरु की तरफ मोड़ा।

गुरु-काल से पूर्व और श्री गुरु नानक देव जी के समय स्त्री की स्थिति बहुत व्याकुल थी। पुरुष से स्त्री का दर्जा नीचा समझा जाता था जिसके परिणामस्वरूप उसको जीवन को हर पक्ष से पुरुष के समान अधिकार प्राप्त नहीं थे। पुरुष प्रधान समाज में उसको अन्य वस्तुओं की तरह एक वस्तु समझा जाता था और उसका मूल्य (दाम) निर्धारित किया जाता था। तथाकथित धार्मिक आगू भी स्त्री को योग्य सम्मान नहीं देते थे। उस समय देश में प्रचलित भारती और सामी दोनों परंपराएं स्त्री जाति को त्रिस्कृत कर रही थीं। मध्यकालीन भारत में भारतीय और सामी संस्कृति ने देश की राजनीतिक स्थिति तथा पुरुष-स्त्री के अंतर ने भारत में औरतों को बुरके में लपेटना, घूंघट में बंद करना, पति की मृत्यु पर स्त्री को जलती चिखा (चिता) में बिठाकर सती (जलाना) करना और लड़कियों को बेचना, अल्प आयु में विवाह कर देना अथवा जन्म लेते ही मार देना आदि घिनौनी

*प्रो. पत्र विहार शिक्षा विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी पटियाला।

सामाजिक कुरीतियों में जकड़ दिया था। गुरु साहिबान ने स्त्री की इस दशा को देखकर इसकी केवल कड़ी निंदा ही नहीं की बल्कि सिक्ख संस्कृति में इन लाहनतों को दूर करने की ताकीद भी की। संपूर्ण समाज को स्पष्ट शब्दों में समझाया कि स्त्री से ही संपूर्ण संसार का पसारा हुआ है। स्त्री के कारण ही हमारे बुनियादी संबंध और रिश्तेदारियां बनी हैं, स्त्री के बिना मनुष्य अधूरा है। स्त्री की मृत्यु के उपरांत मनुष्य दूसरी स्त्री की तलाश करता है, राजा-महाराजा भी स्त्री की कोख (उदर) से ही जन्म लेते हैं तो उसे बुरी कैसे कहा जा सकता है?

भंडि जंमीऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु ॥
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ॥
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बंधानु ॥
सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥
(पन्ना ४७३)

इस तरह श्री गुरु नानक देव जी ने स्त्री के शोषण पर आधारित सामाजिक व्यवस्था को स्वीकार्य नहीं किया। संपूर्ण गुरु साहिबान ने स्त्री को मानवीय समाज में नीच तथा घटिया समझे जाने की डटकर विरोधता ही नहीं की बल्कि अपने समय में प्रचलित सती प्रथा, पर्दा प्रथा, सूतक आदि की भी निंदा की जिस सम्बंधी गुरबाणी में भी अनेकों उदाहरण दर्ज हैं। प्रमुख बात यह है कि भारत में गुरु साहिबान की पंद्रहवीं तथा सोलहवीं शताब्दी की पुरुष और स्त्री की समानता की सोच इंनकलाबी थी। यूरोप में नारी-उत्थान की सोच अठारहवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी में आरंभ होकर बीसवीं शताब्दी में विकसित हुई परंतु भारत में गुरु साहिबान ने १५वीं और १६वीं शताब्दी में ही इसको साकार रूप देना शुरू कर दिया था। स्त्री और पुरुष के बीच भेदभाव को दूर करने के लिए श्री गुरु अमरदास जी ने संगत को हुक्म दिया था कि स्त्रियां पर्दा कर संगत में न आएं तथा पुरुषों के साथ पंगत में बैठकर लंगर छकें। श्री गुरु अरजन देव जी ने परिवार में स्त्री का दर्जा बहुत उत्तम बताया है :

सभ परवारै माहि सरेसट ॥
मती देवी देवर जेसट ॥
धंनु सु ग्रिहु जितु प्रगटी आइ ॥
जन नानक सुखे सुखि विहाइ ॥ (पन्ना ३७१)

जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब कश्मीर यात्रा से वापिस आते हुए गुजरात शहर (पाकिस्तान) में पीर शाह दौला से मिले तो गुरु जी के जाहो जलाल और शानो-शौकत तथा परिवार को देखकर पीर शाह दौला ने कहा, "स्त्री किआ व फकीर किआ?" तो सतिगुरु ने "स्त्री को ईमान" कहकर उसके मन अंदर स्त्री के लिए पड़ी शंका को दूर किया।

गुरबाणी के बहुत सलोक इस बात को प्रमाणित करते हैं कि सिक्ख मत स्त्री को केवल समानता का दर्जा ही नहीं देता बल्कि वह उसको धार्मिक रास्ते पर मनुष्य की पथ प्रदर्शक मानता है और उसको धार्मिक तथा परमार्थक रास्ते पर चलने के बराबर अधिकार हैं। यहां विश्व के लगभग सभी प्रमुख धर्मों में स्त्री को सामाजिक रूप में त्रिस्कृत किया गया है और पाप और बुराई का कारण समझा गया है, नाथ-जोगियों ने उसको बाघनि नागिन तक कहकर निंदा की है, वहीं गुरु साहिबान ने उसको प्रभु-प्राप्ति के लिए एक अड़चन नहीं माना बल्कि सहायक स्वीकृत किया है। इसलिए उन्होंने घर-बाहर छोड़कर सन्यास के मार्ग का समर्थन करने वालों की निंदा की और गृहस्थ जीवन अच्छी तरह व्यतीत करने की राह दिखाई :

होइ अतीतु ग्रिह सति तजि फिरि उनहु के घरि मंगणि जाई। (वार १:४०)

योगी, सन्यासी गृहस्थ जीवन त्यागकर

जंगलों और पर्वतों आदि पर इस उद्देश्य से जाते थे कि घर-बाहर और स्त्री से दूर रहकर काम इच्छाओं को वश में किया जाए परंतु श्री गुरु नानक देव जी ने स्पष्ट कर दिया कि दिखावे का सन्यास धारण कर काम-वासना को वश में नहीं किया जा सकता :

हाथ कमंडलु कापड़ीआ मनि त्रिसना उपजी भारी ॥
इसत्री तजि करि कामि विआपिआ चितु लाइआ पर नारी ॥ (पन्ना १०१३)

धार्मिक परंपरा में स्त्री को ऊंचा उठाने के लिए गुरु साहिबान ने कहा कि जीवन-उद्देश्य की प्राप्ति हेतु न तो संसार त्यागने की ज़रूरत है और न ही गृहस्थ धर्म से दूर भागकर स्त्री की निंदा करनी चाहिए बल्कि जो योगी, जपी तपी, सन्यासी स्त्री का विरोध कर संसार त्यागते हैं, उनको इस बात पर भी विचार करना चाहिए कि उनका जन्म भी तो स्त्री से ही हुआ है। इस तरह गुरु साहिबान ने स्त्री के प्रति फैली नफरत और निंदा को धिक्कारा और सिर्फ सिद्धांतक रूप में ही नहीं बल्कि व्यवहारिक रूप में स्त्री को नीचा या दूसरा दर्जा नहीं दिया जो उन्होंने सिद्धांतक रूप में कहा उसको अमली जामा भी पहनाया। सिक्ख इतिहास इस बात का साक्षी है कि श्री गुरु नानक देव जी के समय से ही स्त्रियों ने समाज के विकास में समानता का योगदान डालते हुए अलग-अलग रूपों और सम्बंधों द्वारा एक आदर्श भूमिका अदा की। बेबे नानकी जी, माता खीवी जी, बीबी अमरो जी, बीबी भानी जी, माता गुजरी जी, माता सुंदरी जी, माता साहिब कौर जी, माता भागो जी, महारानी जिंदां और अन्य और सिक्ख स्त्रियां सिक्ख कौम के लिए प्रेरणास्रोत बनीं। आज जब हम स्त्रियों के मुद्दे और उनकी शक्ति के योगदान की बात करते हैं तो ऐसी सिक्ख स्त्रियों की सोच और कुर्बानी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब अध्ययन में वुमैन सट्डीज़ द्वारा प्रकट करने की अहम ज़रूरत है।

गुरु साहिबान ने स्त्री को न केवल मर्द के साथ हर पक्ष से समानता का दर्जा दिया बल्कि दोनों को जीवात्मा कहकर परमार्थ के रास्ते पर चलने के लिए प्रेरित किया। वास्तव में सिक्ख धर्म की विलक्षणता इस रहस्य में छुपी हुई है कि मनुष्य शब्द को पुरुष और स्त्री दोनों का सांझा रूप दर्शाया गया है। गुरु साहिबान ने पुरुष और स्त्री में कोई भेदभाव नहीं देखा। उन्होंने बताया है कि यह दो नहीं वास्तव में एक हैं, सृष्टि की अद्‌भुत रचना के दो वृक्ष हैं जिनमें से एक में परमात्मा की ज्योति विराजमान है। *'नारी पुरखु पुरखु सभ नारी सभु एको पुरखु मुरारे ॥'* कहकर श्री गुरु अमरदास जी ने नारी पुरुष का अंतर ही मिटा दिया। गुरबाणी में प्रभु की 'कंत' और 'पिर' आदि के रूप और मनुष्यों (पुरुष और औरत) को जीव स्त्री के रूप में दर्शाया गया है, जिसका उद्देश्य है अच्छे गुणों वाली बनकर नाम-सिमरन द्वारा प्रभु-कंत को पाना :

ना मै कुलु ना सोभावंत ॥
किआ जाना किउ भानी कंत ॥
मोहि अनाथ गरीब निमानी ॥
कंत पकरि हम कीनी रानी ॥ (पन्ना ३९४)

इसलिए गुरबाणी में ब्रह्म को पुरुष और जीवात्मा को स्त्री के रूप में पेश किया गया है और पुरुष व स्त्री के सम्बंध को मालिक और दास द्वारा प्रस्तुत किया गया है। समाज में पुरुष या पति तो आज़ाद है परंतु स्त्री की स्थिति गुलाम से भी बुरी है। स्त्री, पत्नी या दास की इच्छा का पूर्ण होना पूरी तरह मालिक की इच्छा पर ही निर्भर करता है। स्त्री गुलामी वाली स्थिति गुरु साहिबान के समकालीन समाज

को पूरी तरह प्रदर्शित करता है किंतु हमें इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि गुरु साहिबान ने समकालीन समाज के जो चिन्ह प्रयोग किए हैं वह संपूर्ण मानवता को परमात्मा की शरणागति करने के साथ-साथ समाज में स्त्री-पुरुष में बराबरी की भावना उत्पन्न करते हैं। गुरु साहिबान की दृष्टि में संपूर्ण जीवात्माएं स्त्रियां हैं-- *'एका पुरख सबाई नार'* जिन्होंने अपने प्रभु-पति को प्रेम से रिझाना है :

सभे कंत महेलीआ सगलीआ करहि सीगारु ॥
गणत गणावणि आईआ सूहा वेसु विकारु ॥
(पन्ना १५३)

गुरबाणी ने सुहागिन, सुलक्खणी, सुचज्जी, सचिआर बनने के राह बताये हैं वो केवल स्त्रियां के लिए ही नहीं बल्कि संपूर्ण मनुष्यों के लिए बिना किसे नसल, रंग, जाति और भेदभाव के हैं।

दुनियावी पति-पत्नी का आपसी सम्बंध किस तरह का होना चाहिए इस सम्बंधी भी गुरु साहिबान समानता और एकसुरता से भावना पर ज़ोर देते हैं। पति-पत्नी के सम्बंध को जोड़ने वाली विवाह की रस्म सिक्ख संस्कार में 'कन्यादान' नहीं है, जिसका अर्थ है कि स्त्री संपत्ति का एक हिस्सा है और जिसको दान में दिया जाना चाहिए बल्कि उसको 'अनंद कारज' कहा जाता है। एक रस्म जो आनंद-खेड़ा प्रदान करती है क्योंकि यह दो आत्माओं का सुमेल है जिन्होंने *'एक जोति दुइ मूरती'* होकर रहना है तो जो एक सच्चे प्यार वाला सम्बंध बन सके, यहां दोनों एक-दूसरे के विकास में बराबर के सहायक हो।

एक आदर्श स्त्री-मर्द सम्बंध, जिसके सभी Feminist Thinkers, लेखक एवं समाज सुधारक मांग करते हैं, बारे में तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी के राग सूही में बड़े अनमोल वचन हैं :

धन पिरु एहि न आखीअनि बहनि इकठे होइ ॥
एक जोति दुइ मूरती धन पिरु कहीऐ सोइ ॥
(पन्ना ७८८)

यह रिश्ता निजवादी अस्तित्व प्रकट करने वाला नहीं बल्कि एक परस्पर अस्तित्व प्रकट करने वाला होना चाहिए और दोनों का उद्देश्य गृहस्थ धर्म निभाते हुए अपने सांझे करता 'अकाल पुरख नाल' एकरस (मिश्रित) होना है।

परिवार की सथिरता के लिए गुरबाणी पति-पत्नी के सम्बंध में वफ़ादारी को अहम मानती है। अपनी स्त्री के बिना किसी दूसरी स्त्री के बारे में बुरी भावना रखने वाले पुरुष को गुरबाणी में सदाचार जीवन व्यतीत करने की शिक्षा दी गई है :

-पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र ॥ *(पन्ना २७४)*
-घर की नारि तिआगै अंधा ॥
पर नारी सिउ घालै धंधा ॥ *(पन्ना ११६४)*

सिक्ख रहितनामों में दर्ज है :

पर बेटी को बेटी जानै।
पर इसत्री को मात बखानै।
अपनि इसत्री सो रति होई।
रहितवंद सिंघ है सोई।

भाई गुरदास जी की भी यही ताकीद है :

देखि पराईआं चंगीआं मावां भैणां धीआं जाणै।
(वार २९:११)

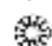
इसी तरह सिक्ख स्त्री को भी सदगुण भरपूर जीवन जाच ग्रहण करने की ताकीद की है। अवगुणों और बुरी सोच वाली स्त्री के सम्बंध में भी श्री गुरु नानक देव जी के वचन हैं कि विकारों में जूझती हुई स्त्री को न संसार में सुख मिलता है और न ही परलोक में ढोई :

कामणि कामि न आवई खोटी अवगणिआरि ॥
ना सुखु पेईऐ साहुरै झूठि जली वेकारि ॥
(पन्ना ५६)

पुरुष व स्त्री अपने सदाचारी जीवन द्वारा ही एक दृढ़ समाज का निर्माण कर सकते हैं। इसे यह सांझी और प्रेरणा श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी से मिलती है तथा दोनों को ही परस्पर प्यार के साथ और एक-दूसरे के पूरक होकर जीवन व्यतीत करने के आदेश हैं।

यह गुरु साहिबान के आशीर्वाद और सोच के सदका ही है कि सिक्ख रहितनामों में भी सिक्ख स्त्रियों को मर्दों के समान अधिकार दिए गए हैं।

समाज में यह परिवर्तन हमारी सोच में बदलाव आने से ही मुमकिन है और यह तभी संभव है अगर मर्द व स्त्री दोनों प्रत्येक भूमिका, रिश्ते और क्षेत्र में एक-दूसरे को समानता का दर्जा, दें एक-दूसरे का सम्मान करें और एक-दूसरे के बहुपक्षीय विकास में सहायता करें।



सर्वकल्याणकारी है प्रभु का नाम-सुमिरन

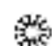
(पृष्ठ २१ का शेष)

मात गरभ तुम ही प्रतिपालक मित्र मंडल इक तुही ॥
तुमहि पिता तुम ही फुनि माता तुमहि मीत हित भ्राता ॥
तुम परवार तुमहि आधारा तुमहि जीअ प्रानदाता॥
तुमहि खजीना तुमहि जरीना तुम ही माणिक लाला ॥
तुमहि पारजात गुर ते पाए तउ नानक भए निहाला ॥ (पन्ना १२१५)

मनुष्य को 'नाम-सुमिरन' में अपना तन, मन, धन सब अर्पण कर देना चाहिए। नाम जपना है तो भक्त ध्रुव की तरह, भक्त प्रहिलाद की तरह जपो, जिससे परमात्मा तक पहुंचा जा सके। भक्त कबीर जी का पावन फरमान है:

राम जपउ जीअ ऐसे ऐसे ॥
ध्रू प्रहिलाद जपिओ हरि जैसे ॥
दीन दइआल भरोसे तेरे ॥
सभु परवारु चड़ाइआ बेड़े ॥ (पन्ना ३३७)

नाम की महिमा अपरम्पार है। ईश्वर स्वयं ही अपना 'नाम' जपाने वाला है। इसलिए सदैव ईश्वर से ही उसका 'नाम' मांगना चाहिए। 'नाम' से ही समस्त दुखों-क्लेशों का मूल नाश होता है। जीव को संसार में रहते हुए भी संसार में निर्लिप्त होकर विचरण करना चाहिए। समय की धारा का प्रवाह निरंतर गतिमान है। एक बार बीत गया समय दोबारा हाथ नहीं आता। फिर सिवाय पछताने के और कुछ शेष नहीं रह जाता। समय की गतिशीलता को पहचानते हुए जीवन को नाम-सुमिरन में सफल बनाना चाहिए। इस संसार में एकत्र की गयी धन-दौलत को कोई भी गठड़ी बांध कर साथ नहीं लेकर जा सका, साथ जाता है तो केवल नाम। इसलिए मनुष्य को जीवन पर्यंत परमात्मा के नाम-सुमिरन में ही रत रहना चाहिए, इसी में उसका और समस्त संसार का कल्याण निहित है।



गुरुद्वारा : संस्था के रूप में

-प्रो बलविंदर सिंह, लुधियाना*

श्री गुरु नानक देव जी के समय एवं उनसे कुछ समय बाद भी जहां 'संगत' तथा सत्य की विचार करने वाले सिक्ख गुरु के पास बैठकर तत्ववेत्ता एवं ज्ञाता बनते थे, उस पवित्र स्थान को 'धरमसाल' (धर्मशाला) कहते थे। गुरु नानक पातशाह ने गुरसिक्खी की मूल बाणी 'जपु' के शिखर पर पहुंच कर 'धरमसाल' की बड़ी गहरी, गंभीर तथा स्पष्ट व्याख्या की है। इस बाणी के अनुसार धरमसाल वो है जहां सगुण एवं निर्गुण साथ-साथ चलते हैं। दुनिया के अन्य मतों वाले मतवान या तो वाहिगुरु के निर्गुण स्वरूप की प्रशंसा करते हैं तथा दुनिया त्याग देने की ताकीद करते हैं या उसके सगुण स्वरूप को आगे रखकर अंधाधुंध ऐसे भागते हैं कि उनको अपनी होश ही नहीं रहती। वे मदमस्त हो, रसों-कसों में फंसकर, स्वादों में खचित होकर, जीवन को व्यर्थ गंवा कर चले जाते हैं। गुरु नानक साहिब निर्गुण एवं सगुण स्वरूप को इकट्ठा देखते हैं तथा इकट्ठा रखते हैं। गुरमति द्वारा बताए इस संतुलन को जब जीवन में ढाल लिया जाता है तो सारी धरती ही 'धरमसाल' बन जाती है।

'धरमसाल' वो जगह है जहां निर्गुण तथा सगुण का खूबसूरत संगम होता है। रात, ऋतु, थित, वार इनका कोई स्थूल स्वरूप नहीं। इनको पकड़ा नहीं जा सकता, इनको तो केवल महसूस किया जा सकता है। यह वाहिगुरु का एक बहुत बड़ा गुण है। पवन, पानी, अग्नि व पाताल इनको हासिल भी किया जा सकता तथा इनका आनंद भी लिया जा सकता है। ये सब रचनाएं वाहिगुरु का सगुण स्वरूप हैं। इसकी समझ 'धरमसाल' अथवा 'गुरुद्वारे' से होती है। जब मनुष्य दुनिया भर के पाखंडों से हटकर, निकम्मे भ्रमों तथा कर्मों को त्याग कर, वाहिगुरु के सगुण स्वरूप का आनंद लेता हुआ, निर्गुण की आराधना कर, मन को गुरु की कृपा द्वारा साध कर 'गुरु' तथा 'गुरुद्वारे' द्वारा दी हुई जीवन-जाच को जीयेगा तो वह मनुष्य गुरसिक्ख बन जायेगा तथा उसका घर 'धरमसाल' कहलायेगा। भाई गुरदास जी के कथन के अनुसार गुरु नानक साहिब के चरणों के स्पर्श से हर घर 'धरमसाल' का रुतबा प्राप्त कर गया और उसके अंदर किरत के साथ-साथ, कर्ता की कीर्ति की धुनें भी सुनाई देने लगीं। ऐसी है 'धरमसाल', यह है कार्य 'गुरुद्वारे' का और यही संकल्प है गुरुद्वारे सम्बंधी महान गुरु, गुरु नानक साहिब का।

'गुरुद्वारा' अपने आप में महान पवित्रता समोये बैठा है। 'गुरुद्वारे' का क्या भाव है, क्या भावना है, यह विचारने तथा समझने की ज़रूरत है। 'गुरुद्वारे' का अर्थ है 'गुरु-घर', 'गुरु का दुआरा (द्वारा)'। इसको गुरु जी का दरवाजा या किवाड़ कह सकते हैं अर्थात् वह घर जिसमें गुरु पातशाह निवास करते हैं। श्री गुरु नानक देव जी के मुताबिक 'गुरु का द्वारा' अर्थात् 'गुरुद्वारा' वह स्थान है जहां से गुरमति की समझ आती है। हम इस दुनिया में आये हैं। हमें यह शरीर रूपी पात्र प्राप्त हुआ है। इसको इस प्रकार से तराशना है कि इस दुनिया

के मालिक व समस्त सृष्टि के सृजनहार को अच्छा लगने लग जाये। इस पात्र का भीतरी मन दौड़ता-भागता है। यह पल भर भी टिकता नहीं अर्थात् टिकने नहीं देता। इस अफरा-तफरी में यह अति मलीन हो चुका है। शरीरों को केवल धोने, शृंगारने एवं संवारने से ही हम वाहिगुरु को अच्छे नहीं लगेंगे, आवश्यकता है कि हमारे तथा वाहिगुरु के दरमियान झूठ की कतार टूटे और हम ऐसे बोल बोलें कि पिता-वाहिगुरु हमें स्वयं प्यार करने लग जाये। 'गुरु का द्वारा' अर्थात् 'गुरुद्वारा' वो स्थान है जहां से आदर्श जीवन-जाच की सूझ पड़ती है:

भांडा हछा सोइ जो तिसु भावसी ॥
भांडा अति मलीणु धोता हछा न होइसी ॥
गुरू दुआरै होइ सोझी पाइसी ॥
एतु दुआरै धोइ हछा होइसी ॥
मैले हछे का वीचारु आपि वरताइसी ॥
मतु को जाणै जाइ अगै पाइसी ॥ (पन्ना ७३०)

श्री गुरु नानक देव जी के इस शबद से यह दिशा मिलती है कि गुरुद्वारे से गुरु द्वारा दिया हुआ ज्ञान मिलता है ताकि मनुष्य तरह-तरह के भ्रमों में ही न पड़ा रहे। गुरु की दी गई समझ से इस जन्म को किस प्रकार संवारा जा सकता है। लिया हुआ अमोलक जन्म निष्फल न जाये क्योंकि हमने तो आगा संवारने के लिए यह जन्म पाया है। गुरमति का हुक्म है :

आगाहा कू त्राघि पिछा फेरि न मुहडड़ा ॥
नानक सिझि इवेहा वार बहुड़ि न होवी जनमड़ा ॥
(पन्ना १०९६)

अगर इस बार मिली ज़िंदगी भलीभांति संवार ली जाये तो तीनों लोकों में अपने-आप डंका बजेगा। पिछले जन्मों का चक्र छोड़कर वर्तमान में विचरण करना है, उत्साह से आगे चलना है, पीछे नहीं मुड़ना। इस प्रकार अगर यह जन्म संवार लिया जाये तो पुन: जन्म नहीं होगा।

सभी दुनियादार जीव तथा मनुष्य अपने शरीर के भरण-पोषण में लगे हुए हैं। नौ द्वार प्रकट हैं। इनकी भूख को तृप्त करने में ही ज़िंदगी व्यतीत हो जाती है। दसवें द्वार का कैसे पता चले? वो द्वार सूक्ष्म है, गुप्त है, उसका पता तो केवल गुरु से तथा गुरुद्वारे के साथ सुरति जोड़ने पर ही लगता है :

--हरि जीउ गुफा अंदरि रखि कै वाजा पवणु वजाइआ ॥
वजाइआ वाजा पउण नउ दुआरे परगटु कीए दसवा गुपतु रखाइआ ॥
गुरदुआरै लाइ भावनी इकना दसवा दुआरु दिखाइआ ॥ (पन्ना ९२२)
--नउ दरवाजे दसवा दुआरु ॥
बुझु रे गिआनी एहु बीचारु ॥
कथता बकता सुनता सोई ॥
आपु बीचारे सु गिआनी होई ॥ (पन्ना १५२)

जो इस द्वार को जान ले वही ज्ञानी है। ज्ञान का दाता गुरु है। सूझ प्रदान-कर्त्ता गुरु है। गुरुद्वारा इसी की सूझ करायेगा तथा गुरसिक्ख गुरु से ज्ञान प्राप्त करके ज्ञानी बन जायेगा, क्योंकि उसने यह पहेली जान ली है एवं गुरु-कृपा द्वारा अपने आप को पहचान लिया है।

हम इस जीवन में देखते हैं कि जब कोई मनुष्य अपने किसी मित्र के साथ ज्यादा घुल-मिल जाये, हर दम उसका ही संग चाहे तो कहते हैं, "तू तो उसके साथ ऐसे रहता है जैसे उसके साथ ब्याहा हुआ है।" भाव यह कि जिसका साथ अच्छा लगे, जिसका संग मन को भाये, उस सम्बंधी ही हम ऐसा कहते हैं। यही हाल पुरुष-स्त्री के विवाहित सम्बंधों के बारे में है। विवाहित दंपत्ति विवाह के उपरांत इकट्ठे

एक जगह पर रहते हैं। गुरु नानक साहिब इस सम्बंध में बड़ी खूबसूरत बात कहते हैं :

गुरु दुआरै हमरा वीआहु जि होआ जां सहु मिलिआ तां जानिआ ॥

तिहु लोका महि सबदु रविआ है आपु गइआ मनु मानिआ ॥ *(पन्ना ३५१)*

इसमें गुरदेव कहते हैं-- "मैं गुरुद्वारे के साथ जुड़ गया हूं। गुरु की मति का प्रकाश हृदय में हो गया है। उसके साथ मेरा आत्मिक मिलन हो गया है। उसके साथ मैं ब्याहा गया हूं तथा गुरु-कृपा द्वारा मुझे अकाल पुरख सम्बंधी इस तरह प्रकाश हुआ है कि मेरा मन सदैव खुशी में है। ऐ दुनिया के लोगो! वह शब्द अनाहद मेरे अंदर रच गया है, जिससे मेरा अहं दूर हो गया है।" बस, समझने की बात यह है कि यदि जगत-पिता गुरु नानक साहिब का मन गुरुद्वारे के साथ ब्याहे जाने या जुड़ जाने से अनहद खुशियां प्राप्त कर सकता है तो फिर यदि हम जुड़ जायें तो हम भी सदीवी खुशियां प्राप्त कर सकते हैं, हमारा अहं खत्म हो जायेगा। सांप्रदायिकता, भेदभाव, मनमुटाव, दुश्मनियां तथा बंटने का नाश होगा; प्रभु से एक हो जायेंगे।

गुरुद्वारा : एक संस्था : 'गुरुद्वारा' ईंट, मिट्टी, चूना, सीमेंट, लोहा, लकड़ी, संगमरमर, ग्रेनाइट या अन्य कीमती नक्काशियों, कला-कृतियों से नहीं बनता। गुरुद्वारे की खूबसूरती तथा स्तुति आध्यात्मिक वस्तुओं के साथ है। जब ये स्रोत गुरुद्वारे में से निकल कर अतृप्त ज़िंदगी को शांति प्रदान करते हैं तो सब वस्तुएं सुंदर तथा शोभनीय लगने लग जाती हैं।

गुरुद्वारे का सबसे पहला तथा मुख्य अंग है 'संगत'। *"सतसंगति कैसी जाणीऐ ॥"* का उत्तर है : *"जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥"* यही महान कार्य गुरुद्वारे का है। यहां पर साधसंगत एकत्र होती है। संगत की एकत्रता साध-रूप होती है। गुरु के सम्मुख एकत्र होकर सुरति लगती है तथा दुविधा दूर होती है; मन मिलते हैं, सच्चे शबद के स्वभाव का ज्ञान प्राप्त होता है। कथा-कीर्तन एवं शबद-बाणी की व्याख्या हउमै का पर्दा उतार कर प्रतापी पुरख, सति पुरख, आनंददायक अकाल पुरख के साथ मिला देती है:

साध संगि जउ तुमहि मिलाइओ तउ सुणी तुमारी बाणी ॥

अनदु भइआ पेखत ही नानक प्रताप पुरख निरबाणी ॥ *(पन्ना ६१४)*

गुरुद्वारे का दूसरा महान अंग है 'पंगत'। पंगत में सब गुरु के प्यारे ऊंच-नीच, अमीर-गरीब, जात-पात के भेदभाव के बिना इकट्ठे बैठकर अन्न-पानी ग्रहण करते हैं। सदियों से इन भेदभावों के कारण मनुष्य जाति बंटी हुई है। इसी बांट से खंड-खंड हुई मानवता कमज़ोर और दुर्बल होकर भटकती है।

गुरु पातशाह ने गुरुद्वारों के साथ लंगर अथवा पंगत स्थापित कर मनुष्य की ज़िंदगी के सफर को आसान कर दिया, भ्रम मिटा दिया, फोकट कर्म खत्म कर दिये। दो प्रकार के लंगर का ज़िक्र है--'शबद लंगर' और 'लंगर दौलत'। 'रामकली दी वार' में भाई सत्ता जी-भाई बलवंड जी ने इसका विस्तार से उल्लेख किया है।

तीसरा अंग--हर गुरुद्वारे के साथ एक 'निशान साहिब' लगा होता है। यह भली प्रकार परखने की ज़रूरत है कि निशान साहिब का भाव क्या है? प्राचीन पोथियों तथा लिखितों में 'जपु जी साहिब' की जगह पर 'जपु नीसाणु' लिखा मिलता है। इसका भाव है कि 'जपु' अब जंगलों, गुफाओं में छुप कर नहीं किया जायेगा। 'जपु' वाले को किसका डर है? 'जपु' तो निर्भय करता है। 'नीसाणु' का शब्दी अर्थ है--धौंसा,

नगाड़ा। यह निडरता तथा अभय राज्य की निशानी है। जहां पर यह लगा है वहां भय कोई नहीं, डर कोई नहीं। जो डर या भय संयम या अनुशासनता का था, वह अकाल पुरख की चाकरी से खत्म हो गया और हमारी दशा क्या बनी कि हम स्वयं अपने साहिब के अंग-संग होने के कारण उसका अंग ही बन गये। यह पद प्राप्त हुआ खसम (प्रभु) की चाकरी के कारण :

एह किनेही चाकरी जितु भउ खसम न जाइ ॥
नानक सेवकु काढीऐ जि सेती खसम समाइ ॥
(पन्ना ४७५)

गुरुद्वारा साहिब में झूलता निशान साहिब इस बात का प्रतीक है कि यहां पर निर्भयता है, अभय-दान है। यहां पर गुरु को मानने वाले पवित्र आत्माओं के मालिक इकट्ठे होते हैं। यहां पर आने वालों को बराबरी तथा एकता का वातावरण मिलेगा और सतिसंग प्राप्त होगा; शरीर को पालने के लिए एक जैसा, एक समान अटूट लंगर मिलेगा। यहां पर आने वालों का मन नीचा तथा मति ऊंची होगी। इसके साथ जुड़ने वालों की आबरू महफूज होगी।

गुरुद्वारे का चौथा मुख्य अंग है--'शफ़ाखाना'। इस पवित्र परंपरा का विकास, गुरु नानक साहिब से ही हो गया था। श्री गुरु नानक साहिब ने कुष्ठ रोग से पीड़ित एक कुष्ठ रोगी का उपचार अपने पवित्र हाथों से करके उसको आरोग्य किया। इस महान ऐतिहासिक घटना के बाद सभी गुरु साहिबान ने गुरुद्वारों के साथ 'शफ़ाखाना' बनाना अनिवार्य कर दिया। श्री गुरु हरिराय साहिब द्वारा कीरतपुर साहिब में कायम किया 'शफ़ाखाना' इस परंपरा का शिखर है। उस शफ़ाखाने में नायाब दवाइयां, जो शाही दवाखाने में भी नहीं थीं, वे भी उपलब्ध थीं तथा ये बिना किसी भेदभाव के ज़रूरतमंदों को दी जाती थीं। गुरुद्वारा जहां रोग-रहित बलशाली ऋष्ट-पुष्ट आत्मा तथा मन का निर्माण करता है वहीं शरीर को भी ऐसा ही रखता है। शरीर ही तो उस बलवान, पवित्र आत्मा का वाहक है। इसको ऐसे ही संवार कर रखना है, जिस प्रकार सवार अपने घोड़े को और आधुनिक मनुष्य अपनी कार या गाड़ी को रखता है।

दवाखाने तथा शफ़ाखाने में एक विशेष अंतर है। दवाखाने में वैद्य, हकीम, डाक्टर को अपनी दवाई तथा हिकमत पर गर्व होता है। गुरमति में चतुराइयों तथा हिकमतों की कोई जगह नहीं। इंसान को लाखों हिकमतें क्यों न आती हों, इनकी जरा भी मान्यता उस परमात्मा के दर पर नहीं। दवाई शफ़ाखाने में भी दी जाती है परंतु परवरदिगार पर भरोसा रख कर। शफ़ाखाना चलाने वाले के मन में यह प्रबल इच्छा होती है कि रोगी ठीक हो; कर्त्ता (प्रभु) मुझे कारण बनाकर दवाई दिलवा रहा है। शफ़ा तो उसके हाथ में है। वह अपनी लाज स्वयं पालता है तथा रोगी अच्छा-भला हो जाता है। दवाखाने वाला व्यापार करता है किंतु शफ़ाखाने वाला प्यार। दवाखाने वाले की नज़र रोगी की जेब पर होती है, उसकी दर्द का एहसास उसको नहीं होता या बहुत ही कम होता है। शफ़ाखाने वाले की नज़र रोगी की जेब के नीचे धड़कते दिल की अंदरूनी पीड़ा में है। वह उसका दर्द महसूस करता है। इस तरह के शफ़ाखाने गुरू साहिबान गुरुद्वारों के साथ बनाते थे तथा हमसे भी इसी तरह चाहते हैं।

आधुनिक समय में जब मेडिकल विज्ञान तरक्की की चढ़ाइयां चढ़ कर शिखर पर पहुंच रही है तब गुरुद्वारों के प्रबंधक, सेवादार तथा कमेटियां अच्छी एवं आधुनिक डाक्टरी सेवाएं

भी प्रदान करें। ऐसा करने से स्वाभाविक ही सिक्खी का प्रचार होगा तथा लोगों में श्री गुरु ग्रंथ साहिब एवं सिक्खी के लिए परिपक्व श्रद्धा उत्पन्न होगी। गुरुद्वारा साहिबान अपने वित्त के अनुसार शफाखाने कायम करें, महंगी दवाइयां बिना लाभ-हानि के आधार पर लोगों तक पहुंचाएं। हर गुरुद्वारा कमेटी मेडिकल कालेज, बड़े या छोटे अस्पताल तो खोल नहीं सकती किंतु पैथोलोजिकल लैबोरेट्रीज खोल कर, रोग की पहचान करके, सही रिपोर्ट देकर रोगियों को अनिश्चितता में से निकाल कर उनकी परेशानी तो कम कर ही सकती है।

गुरुद्वारे का पांचवां अंग है--'शिक्षा'। गुरुद्वारा साहिब के स्वरूप को इस प्रकार देखा जाये कि गुरुद्वारे की इमारत या हाल एक स्कूल या पाठशाला है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के अंदर दस गुरु साहिबान के रूप प्रकाश-दाता तथा ज्ञान-दाता अध्यात्म के रास्ते पर अध्यापक-स्वरूप हैं। सिक्ख संगत संतों की जमात है, जो गुरबाणी के पाठ रूपी शबद पढ़कर, अपना अज्ञान-अंधेरा दूर कर ज्ञानवान बनती है। तात्पर्य यह हुआ कि गुरुद्वारे का तो काम ही शिक्षा देना है। पिछले समय में गुरुद्वारे के साथ गुरमुखी सिखाने का कार्य किया जाता था। इतिहास सिखाने के लिए 'श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' की कथा एक परंपरा ही बन चुकी थी। इसके अलावा संगीत विद्यालय कीर्तन की शिक्षा दिया करते थे। ऐसी परंपराओं को पुन: अधिकाधिक उत्साह के साथ गतिशील करना चाहिए। धर्म की हानि होती देखकर उस युग में गुरु नानक साहिब ने कहा था:

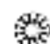
हउ भालि विकुंनी होई ॥
आधेरै राहु न कोई ॥
विचि हउमै करि दुखु रोई ॥
कहु नानक किनि बिधि गति होई ॥

(पन्ना १४५)

गति की विधि गुरु नानक साहिब खुद ही बता रहे हैं। गति संभव है, गुरु, गुरमति, गुरबाणी तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब द्वारा, जिसका द्वार है 'गुरुद्वारा'। गुरु के प्रकाश में अति आवश्यक है कि गुरुद्वारा साहिबान के साथ गुरमति विद्यालय, संगीत विद्यालय, शिक्षण संस्थायें, स्कूल, कालेज, व्यवसायिक कॉलेज आदि वित्त के अनुसार खोलकर शिक्षा के माध्यम के साथ गुरसिक्ख, विद्वान, ज्ञानवान तथा वैज्ञानिक पैदा किए जाएं ताकि गुरुद्वारा साहिबान का वह कार्य जो गुरु साहिब की पवित्र सोचनी ने निश्चित किया था, साकार हो जाये। गुरुद्वारा एक शक्तिशाली संस्था है जो जीवनदाती तथा सुखदायी है।

कोई भी शहर, बस्ती अथवा मुहल्ला या गांव 'शरीर' के समान है तथा उसमें स्थापित गुरुद्वारा उस आबादी की 'आत्मा' के समान है। जैसे आत्मा के अस्तित्व से शरीर का जीवन है बिलकुल उसी तरह गुरुद्वारे के अस्तित्व से शहर, बस्ती या गांव का जीवन है। आज प्रत्येक सिक्ख को यह अरदास करने की ज़रूरत है कि हे मालिक परमात्मा, ऐसा कभी न हो कि हम गुरुद्वारे से टूट या बिछुड़ जायें। गुरुद्वारे से बिछुड़ कर उजड़ जाएंगे।

श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा स्थापित श्री हरिमंदर साहिब (श्री अमृतसर) में गुरदेव ने पहली बार श्री आदि (गुरु) ग्रंथ साहिब का प्रकाश किया। श्री हरिमंदर साहिब पवित्र ताल में कमल की तरह शोभायमान है। गुरसिक्खों ने जीवन में भी कमल की भांति निर्लेप तथा निरालम रहना है।



बाबा बुड्ढा जी
पारिवारिक पृष्ठभूमि तथा गुरु-घर के कार्यों में योगदान

-सिमरजीत सिंघ*

गुरु-काल में अनेक सच्चे एवं निष्ठावान सिक्ख हुए है जिनका ज़िक्र बहुत गर्व से किया जा सकता है। सिक्ख धर्म को इसके संस्थापक गुरु नानक साहिब ने जहां शुद्ध रूहानी गुणों की महक से भरी पटारी के रूप में समूह जनसाधारण के समूचे कल्याण हेतु प्रस्तुत किया वहीं गुरु जी द्वारा स्थापित सिक्ख धर्म में अति ठोस नैतिकचार, व्यक्तिगत आचरण तथा सदाचार की भी एक कसौटी निर्धारित की गई। गुरु जी ने रूहानियत को सामाजिक दायरे में कमाने के लिए उस समय की जनता का आदर्श नेतृत्व किया। उन्होंने स्पष्ट किया कि गृहस्थ मार्ग से ऊंचा एवं निर्मल अन्य कोई धर्म नहीं। गुरु जी ने धर्म को कर्मकांडी पूजा-उपासना से अलग करके, संसार रूपी धर्म-स्थान में नाम जपना, वंड छकना तथा सुक्रित करना धर्म की व्यवहारिक परिभाषा के रूप में प्रदान कर लागू भी किया। गुरु जी ने जनसाधारण के सामने जहां आदर्श व्यक्तिगत जीवन का विस्मादी उदाहरण रखा, वहीं सिक्खी उसूलों के धारक व्यवहारिक मनुष्यों का भी निर्माण किया। जो मनुष्य गुरु जी की सिक्खी की कसौटी पर पूरे उतरे वे सही अर्थों में गुरसिक्ख तथा गुरमुख कहलाये।

समूचे गुरु-काल के हजारों गुरसिक्खों-गुरमुखों के अंदर बिना किसी उम्र के बाबा बुड्ढा जी का प्रथम स्थान रखा जाता है। बाबा बुड्ढा जी ने गुरु-उपदेश को एक सदी से भी ज्यादा समय तक कमाकर गुरु-घर में महानतम रुतबा हासिल किया।

सिक्ख इतिहास की महान शख्सियत बाबा बुड्ढा जी का जन्म ७ कार्तिक, संवत् १५६३ (१५०६ ई) को भाई सुग्घा (रंधावा) जी के घर माता गौरां जी की कोख से गांव कत्थूनंगल, जिला श्री अमृतसर में हुआ। माता-पिता जी ने आप जी का नाम **'बूड़ा'** रखा था। १५१९ ई में गुरु नानक साहिब के सेवक बनकर बाबा जी सिक्खी में शामिल हो गए।

बाबा बुड्ढा जी सिक्ख इतिहास में ऐसी आदरणीय शख्सियत हैं, जिनको सिक्खों के पहले छः गुरु साहिबान की छत्रछाया में गुरु-घर की सेवा अर्जित करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। बाबा बुड्ढा जी बचपन में ही गुरु नानक साहिब की संगत में आकर गुरु-कृपा के पात्र बने एवं श्री गुरु अंगद देव जी से लेकर श्री हरिगोबिंद साहिब तक पांच गुरु साहिबान के गुरगद्दी पर विराजमान होने की रस्में निभाने का शुभ कार्य करते रहे तथा उनके परलोक गमन कर जाने के बाद भी यह सौभाग्य आप जी के उत्तराधिकारियों को प्राप्त हुआ।

बाबा बुड्ढा जी के पूर्वजों के बारे में इतिहासकार बताते हैं कि इस वंश का मुखिया रंधावा था। सर इबटसन की पुस्तक 'पंजाब कास्ट्स' में इन्हें भट्टी राजपूतों में से दर्शाया गया है। ये बारहवीं सदी में राजस्थान के बीकानेर क्षेत्र में से आकर पंजाब के मालवा क्षेत्र में आबाद हो गए। यहां पर इनके संबंध चहिलों के साथ कुछ अच्छे न रहे। एक बार चहिलों ने रंधावों को एक बारात में घेर कर आग लगा दी, जिससे रंधावों का भारी जानी एवं माली नुकसान हुआ। इसी कारण ज्यादातर

*संपादक, गुरमति ज्ञान, गुरमति प्रकाश।

रंधावे मालवा क्षेत्र छोड़कर माझा क्षेत्र में (आज के कत्थूनंगल क्षेत्र में) जाकर आबाद हो गये।

जब ये अपना मालवा इलाके का तामकोट क्षेत्र छोड़ कर, सारा सामान बैलगाड़ियों पर लाद कर माझे के इलाके की ओर जा रहे थे तो अमरगढ़ के पास, जहां आजकल मीमसा गांव आबाद है, उस स्थान पर इनके एक बैलगाड़ी के पहिए का धुरा टूट गया। उस बैलगाड़ी का मालिक अपने परिवार समेत वहीं रुक गया जिसकी औलाद आज इस गांव में आबाद है। इन लोगों में आज तक यह परंपरा चली आती है कि बारह वर्ष बाद अपनी उस घटना को याद के रूप में मनाने के लिए ये लोग उसी स्थान पर इकट्ठे होते हैं जहां बैलगाड़ी का धुरा टूटा था।

गांव कत्थूनंगल श्री अमृतसर से जम्मू को जाते राष्ट्रीय मार्ग पर श्री अमृतसर से २० किलोमीटर तथा बटाला शहर से पहले १८ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। कत्थूनंगल का पुराना नाम गग्गोनंगल था। गग्गो बाबा बुड्ढा जी के दादा जी का नाम था। गग्गो के पिता जी का नाम राजा दल था, जिन्होंने चविंडा देवी गांव बसाया था। सीना-ब-सीना चली आ रही कथा के अनुसार यह वो स्थान है जहां सुरों-असुरों में भयानक युद्ध हुआ था। इस स्थान पर देवी ने चंड तथा मुंड शक्तिशाली राक्षसों का संहार किया था, जिस कारण इस जगह का नाम 'चमुंडा देवी' पड़ गया तथा आजकल इसको 'चविंडा देवी' कहा जाता है। इस स्थान पर ऊंचे वीरान टीले थे। जब राजा दल ने यह नगर बसाया तो सबसे पहले चविंडा देवी का मंदिर बनाया तथा बटाला के ब्राह्मण से इस देवी की मूर्ति लाकर इस स्थान पर स्थापित की। जिस स्थान पर ब्राह्मण और राजा दल का मिलन हुआ वो स्थान 'घसीटपुर' (तहसील बटाला, जिला गुरदासपुर) है, जहां पर अब भी कुआं और पीपल का एक वृक्ष है। राजा दल के पिता पोपट ने 'बटाला' नगर बसाया था तथा इसके पुत्र गग्गो ने चविंडा देवी से तीन किलोमीटर की दूरी पर शाही मार्ग पर बाईं दिशा में 'गग्गोनंगल' गांव बसाया और यहीं पर एक किला बनवाया, जिसके चारों कोनों पर चार गोल मीनार थे तथा अंदर एक कुआं था।

श्री गग्गो की दो पत्नियां थीं--निहाली और भागां। निहाली के पांच पुत्र थे तथा भागां के तीन पुत्र थे। आजकल भी गांव की दो पत्तियां 'निहाली' एवं 'भागां' के नाम पर हैं। श्री गग्गो २२ गांवों का मालिक था। अब भी चविंडा देवी को 'बाईवास चविंदा' कहा जाता है। गग्गोनंगल किले के सामने थोड़ी-सी दूरी पर श्री गग्गो का अंतिम संस्कार किया गया तथा यादगार के रूप में पुरानी रीति के अनुसार आठ-कोनों वाला चबूतरा बना दिया गया। श्री गुरु नानक साहिब का बाबा बुड्ढा जी के साथ पहली बार १५१९ ई में मिलन हुआ था। उस समय बूड़ा जी (बाबा बुड्ढा जी) की आयु ११-१२ वर्ष की थी। जब बूड़ा जी का गुरु नानक साहिब के साथ मिलन हुआ तो बालक ने गुरु जी को माथा टेका और कहा कि "मेरा उद्धार करो!" गुरु जी ने बालक से पूछा कि "तुझे क्या दुख है?" तो बालक ने बताया, "हमारे गांव पर मुगलों ने हमला कर दिया था। उन्होंने सारी कच्ची-पक्की फसलें काट लीं। उस समय मेरे मन में यह विचार आया कि अगर किसी ने डर के मारे इन जाबिरों के हाथ नहीं पकड़े तो उस यम के हाथ पकड़ने वाला कौन है?" गुरु जी ने बालक की ये बातें सुन कर कहा कि "तेरी बुद्धि तो 'बुड्ढों' वाली है अर्थात् तेरे विचार बहुत उच्च कोटि के हैं।" गुरु जी ने बालक को नाम-सिमरन करने का उपदेश दिया तथा उस दिन से आप जी का नाम 'बूड़ा' से 'बुड्ढा' हो गया। गुरु जी बालक बुड्ढा जी के साथ भाई सुग्धा जी के किले में गए, जहां पर माता गौरां जी ने आप जी की बहुत सेवा

की। 'छजरा नसब कैफियत थेह मौजय कत्थूनंगल १८६५ ई' में लिखा है :

"मुस्समी गग्गो कौम जट्ट गोत रंधावा मरूस ने चविंडा से उठकर जंगल वीरान को बा-इजाजत अपने नाम पर गग्गोनंगल रखा, चंद मुद्दत यही नाम मशहूर रहा, मगर अहदे बादशाही के मुस्समी कत्थूशाह बेटा मरूस आहला शहर दिल्ली में मामला अदा किया करता था, उस अयाम से गांव का नाम कत्थूनंगल मशहूर हुआ। ३३८ बरस उस जगह कदीम पर आबाद रहा, ११२ बरस हुए किलत आबादी, मारधाड़ सिक्खां, इनके दूसरी जगह मलकां ने आबादी जदीद कायम कर ली। तब से आज तक वह आबादी कभी वीरान नहीं हुआ और एक थेह (टीला) पुराना मलकीअत शामलाट (ग्राम सभा) थेह दरमिआन रकबा देह रजा के वाकिआ है।"

इसी 'छजरा कैफिअत नामे' में आगे गग्गो की पत्नियों तथा पुत्रों के चुंडा-बांट (जायदाद बंटवारा) आदि के बारे में जिक्र किया गया है। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि 'गग्गोनंगल' से 'कत्थूनंगल' नाम कैसे पड़ा।

गुरु नानक साहिब उस समय करतारपुर नगर बसाकर वहां 'किरत करो, नाम जपो तथा वंड छको' का उपदेश देकर दुनिया का उद्धार कर रहे थे। भाई अजित्ता (रंधावा) जी को जब गुरु नानक साहिब ने गांव (करतारपुर) बसाने की तजवीज की थी तो गांव के लोगों ने अपनी जमीनें उनके हवाले कर दीं। गुरु जी ने 'गरीब का मुंह गुरु की गोलक' का उपदेश संगत को दिया। करोड़ी नाम के चौधरी ने पहले तो कोशिश की कि करतारपुर न बसे परंतु जब गुरु जी के दर्शन किये तो अपनी १०० बीघा जमीन नगर के नाम कर दी। भाई दुनीचंद तथा अन्य कितने ही श्रद्धालु आकर करतारपुर बस गये। बाबा बुड्ढा जी घर का काम-काज संभाल कर रोजाना गुरु जी के दरबार में हाजरी भरते तथा आई हुई संगत की अपने हाथों से सेवा करते। गुरु नानक साहिब बाबा बुड्ढा जी को बहुत प्यार करते थे। बाबा जी ने 'लंडे' तथा 'टाकरी' अपने पिता जी से सीखे थे तथा गुरु नानक साहिब के दरबार में आकर उन्होंने गुरु साहिब से गुरमुखी का ज्ञान प्राप्त किया। गुरु जी के हुक्म अनुसार आप सतिगुरु जी की बाणी और भक्त साहिबान की बाणी पढ़ते। इस प्रकार आप जी को बहुत-सी बाणी कंठस्थ हो गई थी।

जब बाबा बुड्ढा जी की आयु सत्रह वर्ष की हुई तो आप जी के माता-पिता ने आप जी की शादी अच्चल गांव के निवासी बीबी मिरोखा जी के साथ की। आप जी के विवाह में गुरु जी का परिवार भी शामिल हुआ। आप जी के घर चार सपुत्रों--भाई सुधारी जी, भाई भिखारी जी, भाई महिमू जी तथा भाई भाना जी ने जन्म लिया।

कुछ समय बाद बाबा बुड्ढा जी के पिता भाई सुग्घा जी का देहांत हो गया। उनका अंतिम संस्कार करके आप जी अभी रिश्तेदारों-संबंधियों के साथ घर ही आए थे कि बाबा जी की माता जी भी परलोक गमन कर गए। उन दिनों में मृतक के अंतिम रस्मों के समारोहों में बहुत वहम-भ्रम तथा कर्मकांड किये जाते थे। बाबा बुड्ढा जी ने अपने मृतक माता-पिता के संबंध में गुरमति की छत्र-छाया तले सभी कर्मकांडों को ठुकराकर पूर्ण गुरसिक्ख होने का सबूत दिया। गुरु नानक साहिब ने अपने पवित्र कर-कमलों से आप जी के सिर पर दसतार सजाकर आपको परिवार की जिम्मेदारी संभालने तथा समाज में गुरसिक्खी का प्रचार करते हुए हर एक के सुख-दुख में शामिल होने का उपदेश दिया। बाबा बुड्ढा जी माता-पिता के परलोक गमन कर जाने के बाद परिवार की सारी जिम्मेदारियां बाखूबी निभाते हुए किरत करके

गृहस्थ धर्म की पालना करते रहे।

गुरु नानक साहिब ने उत्तराधिकारी का चुनाव करते समय अपनी ज्योति भाई लहिणा जी में परिवर्तित करनी थी तो उन्होंने भाई लहिणा जी को गुरगद्दी पर विराजमान करने की रस्म पूरी करने हेतु बाबा बुड्ढा जी को कहा। जून, १५३९ ई में भाई लहिणा जी को अपना अंग जानकर श्री गुरु अंगद देव जी के रूप में स्थापित कर दिया जिसका जिक्र ज्ञानी गिआन सिंघ 'पंथ प्रकाश' में करते हैं :

जदपि सेवक सिख थे औरैं।
श्री बुड्ढै लौ अन कै गौरैं।

श्री गुरु अंगद देव जी गुरिआई प्राप्त करके श्री गुरु नानक देव जी के हुक्मानुसार खडूर साहिब आ गए। खडूर साहिब आकर उन्होंने नई 'धरमसाल' स्थापित की। जब श्री गुरु अंगद देव जी कुछ समय के लिए माता भिराई जी के घर एकांतवास हो गए तो संगत गुरु–दर्शनों की इच्छा से विह्वल हो गई। बाबा बुड्ढा जी ने गुरु जी का एकांत निवास–स्थान ढूंढ लिया। बाबा बुड्ढा जी ने भाई बलवंड जी को कीर्तन करने के लिए कहा। श्री गुरु नानक देव जी की अलाही बाणी का कीर्तन सुनकर श्री गुरु अंगद देव जी बाहर आ गये। संगत बाबा बुड्ढा जी के नेतृत्व में गुरु–दर्शन करके तृप्त हो गई।

श्री गुरु नानक देव जी का यादगारी स्थान करतारपुर की तरफ रावी दरिया का रुख होने के कारण हर साल बाढ़ आ जाने के कारण नगर पानी की लपेट में आ जाता था।

श्री गुरु नानक देव जी के ज्योति–जोत समाने के बाद बाबा सिरीचंद जी तथा बाबा लखमी दास जी ने गुरु नानक साहिब के नाम पर एक यादगारी नगर बसाने की योजना बनाई। इस काम के लिए बाबा सिरीचंद जी ने गुरु साहिब के प्यारे सिक्ख भाई कमलीआ जी को बाबा बुड्ढा जी के घर भेज कर नया नगर बसाने की योजना के बारे में परिचित करवाया। बाबा बुड्ढा जी ने रावी दरिया के पार एक ऊंचे तथा रमणीक स्थान पर गुरु नानक साहिब की याद में 'डेरा बाबा नानक' नामक नगर की नींव रखी।

श्री गुरु अंगद देव जी गुरमुखी को अन्य भाषाओं से अधिक उपयोगी जानकर उसका प्रचार संगत में करना चाहते थे। इस काम के लिए उन्होंने बाबा बुड्ढा जी की जिम्मेदारी लगाई। बाबा जी ने संगत को गुरमुखी पढ़ाने की सेवा का कार्य बाखूबी निभाया एवं इसके लिए पाठशाला भी खोली।

खडूर साहिब में शिवनाथ नाम का एक तपा रहता था, जो जंत्र-मंत्र का डर देकर भोले–भाले लोगों को लूटता रहता था। श्री गुरु अंगद देव जी के प्रचार का सदका तपे के भ्रमजाल से संगत सुचेत हो गई थी। एक बार बरसात के महीने में बारिश नहीं हो रही थी, जिसके कारण फसलें सूख गई थी। कुछ अंधविश्वासी लोगों ने तपे के आगे बारिश करवाने की विनती की तो उसने भोले–भाले लोगों को गुरु जी के विरुद्ध भड़का दिया कि गुरु जी को गांव में से निकाल देना चाहिए, तभी बारिश होगी। जब गुरु जी को इसके बारे में पता चला तो वे खुद ही गांव छोड़कर चले गए। जब गुरु जी को कई दिन गांव से गये हुए हो गए तो भी बारिश नहीं हुई। लोगों को अपनी भूल का एहसास हुआ तो वे बाबा बुड्ढा जी को साथ लेकर गुरु जी को ढूंढ कर उनकी हजूरी में हाजिर होकर गुरु जी से क्षमा मांगकर उन्हें वापिस लेकर आये।

'गोइंदे' नाम का खत्री था जिसकी जमीन ब्यास दरिया के किनारे से लगती थी। वह इस स्थान पर नगर बसाना चाहता था। वह दिन में जो भी निर्माण करता था उसके विरोधी रात को उसको तबाह कर देते थे तथा शोर मचा देते थे कि यह किसी भूत–प्रेत ने किया है। वहमों-भ्रमों का

शिकार गोइंदा खहूर साहिब श्री गुरु अंगद देव जी की शरण में आया। गुरु साहिब ने गोइंदे द्वारा बताई जगह पर श्री (गुरु) अमरदास जी को नगर बसाने का हुक्म किया। श्री (गुरु) अमरदास जी ने बाबा बुड्ढा जी आदि सिक्खों को भाई गोइंदे के साथ लेकर १५४६ ई में 'गोइंदवाल' नगर बसाया। बाबा बुड्ढा जी कुछ समय गोइंदवाल गुरु-दरबार में रहकर सेवा करते रहे।

बाबा बुड्ढा जी के सबसे छोटे सपुत्र भाई भाना जी ने एक खूबसूरत नगर बसाया जिसका नाम 'भाना तलवंडी' रखा गया। बाबा बुड्ढा जी ने संगत की मांग पर इस नगर में एक कुआं खुदवाया तथा ईंटें तैयार करवाकर कुएं को पक्का किया। इस कुएं का नाम 'बाबा बुड्ढा जी दा खूह' करके प्रसिद्ध है।

श्री गुरु अंगद देव जी ने अपना अंतिम समय निकट जान कर गुरगद्दी की जिम्मेदारी सेवा तथा सिमरन के पुंज बाबा अमरदास जी को सौंप दी। श्री गुरु अंगद देव जी २९ मार्च, १५५२ में ज्योति-जोत समा गए। जब श्री गुरु अंगद देव जी ने अपने उत्तराधिकारी बाबा अमरदास जी को गुरिआई दी तो प्राचीन धैर्यवान सिक्ख भी बाबा अमरदास जी के साथ थे। बाबा अमरदास जी को अपने हाथों से गुरगद्दी पर विराजमान कराने का मान बाबा बुड्ढा जी को ही हासिल हुआ। बाबा दातू ने गुरु जी का अपमान किया जिसको बाबा बुड्ढा जी सहन न कर सके। उन्होंने संगत को समझाया कि गुरगद्दी के असल मालिक श्री गुरु अमरदास जी हैं। इनको गुरगद्दी श्री गुरु अंगद देव जी ने अपने हाथों से सौंपी है। श्री गुरु अमरदास जी ने गुरु-हुक्म के अनुसार गोइंदवाल को सिक्खी का प्रचार एवं प्रसार-केंद्र बनाया।

गुरगद्दी पर विरासती हक जताते हुए बाबा दातू ने गुरु जी के साथ झगड़ा जारी रखा। गुरु जी गोइंदवाल छोड़ कर बासरके आ गये तथा एक कमरे के अंदर एकांतवास अवस्था में बैठ गए। गोइंदवाल की संगत गुरु जी के दर्शन करने के लिए आती मगर गुरु-दर्शन के बिना व्याकुल हो जाती। संगत ने बाबा बुड्ढा जी को विनती की। बाबा जी संगत की विनती को मानते हुए संगत के साथ बासरके की तरफ चल पड़े। बाबा बुड्ढा जी संगत की तृष्णा को तृप्त करना चाहते थे। बाबा बुड्ढा जी ने कमरे की पीछे वाली दीवार में सेंध लगाकर गुरु जी के दर्शन करके तृप्ति हासिल की तथा अपनी गलती की क्षमा-याचना की। गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी से कहा कि "आपने हमारे हुक्म का उल्लंघन किया है।" बाबा बुड्ढा जी ने हाथ जोड़कर कहा, "महाराज! सेवक ने आपके हुक्म का उल्लंघन नहीं किया। देख लीजिए दरवाजा बंद है। सेवक तो सेंध लगाकर अंदर आया है।" गुरु जी बाबा जी की गहन सूझ तथा लियाकत से बहुत प्रभावित हुए। बाबा जी गुरु-दर्शन करके संगत के साथ गोइंदवाल साहिब वापिस आ गए।

बाबा बुड्ढा जी का गुरु-घर के साथ बहुत प्रेम था। वे सिक्खी को ठेस पहुंचाने वालों के साथ सख्ती से पेश आते थे। गोइंदवाल साहिब आकर श्री गुरु अमरदास जी ने उसी मर्यादा को सुरजीत किया। उन्होंने अनुभव किया कि इतने यत्न करने के बावजूद भी शुद्ध-अशुद्ध का ख्याल लोगों के मन में से पूरी तरह नहीं गया। उन्होंने इस समस्या के सदीवी हल के लिए बाउली बनवानी चाही जिसका जल लेने के लिए हर जीव को सीढ़ियों द्वारा नीचे उतरना पड़े; हर इलाके का मनुष्य स्नान कर, भेदभाव रूपी चौरासी से मुक्त हो सके। गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी से ही वैसाखी वाले दिन बाउली खुदवाने का शुभारंभ करवाया। इस पवित्र कार्य की देखभाल की जिम्मेदारी भी बाबा बुड्ढा जी को सौंपी गई और इसको संपूर्ण होने में छः साल लगे।

सिक्खी का बढ़ता फैलाव देखकर श्री गुरु अमरदास जी ने सिक्खी के प्रचार-क्षेत्र को

नियमबद्ध करने के लिए २२ मंजियों की स्थापना की। इस मंजी-प्रथा के मुख्य प्रबंधक बाबा बुड्ढा जी ही थे। जब अकबर बादशाह पहली बार श्री गुरु अमरदास जी के दर्शन के लिए हाजिर हुआ तो बाबा बुड्ढा जी ने ही बादशाह को इस 'निर्मल पंथ' के बारे में परिचित करवाया जिस पर अकबर बादशाह ने गुरु के लंगर में से परशादा छका तथा गुरु जी के दर्शन करके बहुत प्रभावित हुआ। वो जाते समय तीन गांव बीबी भानी जी के नाम लगवा गया और जब तक जिंदा रहा, हर साल वैसाखी पर एक लाख पच्चीस हजार रुपए भेंटा-स्वरूप भेजता रहा। मिले गांवों की जगह पर बाबा जी ने 'गुरु की रक्ख' बनाई जहां पक्षी तथा पशु खुले फिरते थे। एक सुंदर बाग भी बाबा जी ने बनवाया, दूध देने वाले पशु भी वहां पर रखे जिनका दूध हर रोज गुरु के लंगर के लिए उपयोग में लाया जाता था।

श्री गुरु अमरदास जी द्वारा भी गुरु-घर की मर्यादा के अनुसार गुरगद्दी के योग्य अधिकारी भाई जेठा जी (श्री गुरु रामदास जी) को गुरगद्दी पर विराजमान कराने की चली आ रही रीति के अनुसार रस्म निभाने का मान बाबा बुड्ढा जी को ही हासिल हुआ। कुछ समय बाद श्री गुरु अमरदास जी १५७४ ई को ज्योति-जोत समा गये। बाबा बुड्ढा जी ने गुरु जी के ज्योति-जोत समाने के समय सारी रस्में अपने हाथों से की। इस समय बाबा मोहरी जी अपनी पूर्व भूल सुधारते हुए सन्मुख हुए।

श्री अमृतसर के लिए भी बाबा बुड्ढा जी ने बहुत सेवा की। श्री गुरु रामदास जी ने श्री गुरु अमरदास जी की आज्ञा मानकर संवत् १६२७ को संतोखसर सरोवर की खुदाई का शुभारंभ किया और इस सेवा में भी बाबा बुड्ढा जी का बहुत योगदान रहा। 'गुरु का चक्क' नगर की सेवा भी बाबा बुड्ढा जी स्वयं करवाते रहे। श्री गुरु रामदास जी ने संवत् १६३४ को एक अन्य बड़े सरोवर की खुदाई आरंभ की, जिसका नाम 'अमृत सर' प्रसिद्ध हुआ। गुरु साहिब ने अपने पवित्र कर-कमलों से दुखभंजनी बेरी के पास से खुदाई का आरंभ करवाया। बाबा बुड्ढा जी इस महान कार्य की सेवा के लिए एक बेर के वृक्ष (बाबा बुड्ढा जी की बेर) के नीचे बैठकर संगत को टोकरियां-फावड़े देते थे। श्री गुरु अरजन देव जी ने इस सरोवर के मध्य 'श्री हरिमंदर साहिब' की नींव रखवाई। श्री हरिमंदर साहिब की सेवा भी बाबा बुड्ढा जी से श्री गुरु अरजन देव जी ने अपनी निगरानी तले करवाई थी। श्री गुरु अरजन देव जी ने बाबा बुड्ढा जी को समूचे निर्माण के कामों का प्रबंध सौंप दिया। प्रिथीचंद ने गुरगद्दी पर हक्क जताना चाहा परंतु भाई गुरदास जी और बाबा बुड्ढा जी ने संगत को इस गुमराहकुन प्रचार से सुचेत किया तथा गुरु-घर के साथ जोड़े रखा।

श्री गुरु अरजन देव जी ने भाई गुरदास जी तथा बाबा बुड्ढा जी के साथ 'अमृत सर' सरोवर में सुंदर श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण करने के बारे में विचार-विमर्श किया ताकि गुरु जी के हुक्म के अनुसार बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी, भाई साल्हो जी तथा अन्य प्रमुख सिक्खों की निगरानी तले श्री हरिमंदर साहिब के निर्माण का काम हुआ। बाबा बुड्ढा जी इस सेवा की निगरानी अमृत सरोवर की परिक्रमा में एक बेरी के वृक्ष के नीचे बैठकर करते थे।

१५९० ई में श्री गुरु अरजन देव जी धर्म प्रचार के लिए रवाना हुए तो 'बाबे दी बीड़' से गुरु जी बाबा बुड्ढा जी को साथ लेकर मौजूदा तरनतारन वाले स्थान पर पहुंचे। 'तवारीख गुरू खालसा' के अनुसार गुरु जी ने इस स्थान पर एक नगर बसाने एवं एक विशाल सरोवर बनाने की इच्छा जाहिर की। गुरु जी की इस इच्छा पर फूल चढ़ाने के लिए बाबा बुड्ढा जी ने नूरदीन, खारा तथा पलासौर के चौधरियों से बात

की, क्योंकि यह जमीन इन तीनों गांवों की सांझी चरागाह थी। गुरु जी ने यह १८०० बीघा जमीन मोल लेकर १५९० ई में तरनतारन की नींव रखी तथा एक बड़ा सरोवर बनवाया।

गुरु के महिल माता गंगा जी गुरु-दरबार में आने वाली संगत की सेवा बड़ी श्रद्धा-भावना से करते थे। एक बार आप गुरु जी से आज्ञा लेकर बाबा बुड्ढा जी तथा संगत के लिए गुरु का लंगर (मिस्से परशादे, लस्सी, प्याज आदि) लेकर बाबे दी बीड़ (झबाल) पहुंचे। बाबा जी सादा भोजन छकते थे तथा साधारण वस्त्र पहनते थे। बाबा जी ने बड़े प्यार से परशादा छका तथा माता गंगा जी को महाबली पुत्र होने की आशीष दी :

तुमरै ग्रिह प्रगटेगा जोधा।
जा को बल गुन किनूं न सोधा।

(गुर बिलास पा: ६)

श्री गुरु अरजन देव जी के होनहार सपुत्र बाल श्री हरिगोबिंद साहिब की अक्षरी-विद्या तथा शस्त्र-विद्या के साथ घुड़सवारी की सिखलाई आदि की जिम्मेदारी बाबा बुड्ढा जी को ही सौंपी। श्री गुरु अरजन देव जी बाल श्री हरिगोबिंद साहिब को अंगुली पकड़कर खुद बाबा बुड्ढा जी के पास बीड़ साहिब में लेकर गए। बाबा बुड्ढा जी ने पूरी लगन एवं मेहनत से यह जिम्मेदारी पूरी की :

ससत्र सासत्र सभ बिदिया पाई।
हरि गुबिंद मनि हरख धराई।

(गुर बिलास पा: ६)

जब श्री गुरु अरजन देव जी ने पवित्र 'आदि श्री (गुरु) ग्रंथ साहिब' की बीड़ की तैयारी शुरू की तो बाबा बुड्ढा जी ने पूर्व गुरु साहिबान की बाणी एकत्र करने में श्री गुरु अरजन देव जी की मदद की :

एक दिवस प्रभ प्रातहकाल।
इछआ भरे प्रभ दीन दयाल।
यह मन उपजी, प्रगटिओ जग पंथ।
तिह कारन कीजै अब ग्रिंथ ॥२॥

जब गुरु साहिब आदि श्री (गुरु) ग्रंथ साहिब के संकलन तथा संपादन का कार्य कर रहे थे तो उस समय बाबा मोहन जी से बाणी की पोथियां लेकर सादर पालकी में रख कर श्री अमृतसर के लिए रवाना हुए तो बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी तथा श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब जी आगे से लेने के लिए गए। जब श्री गुरु अरजन देव जी ने मानवता के उद्धार हेतु पवित्र ग्रंथ आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब तैयार किया तो बाबा बुड्ढा जी को प्रथम ग्रंथी स्थापित किया गया। 'गुरबिलास पातशाही छेवीं' के अनुसार :

करत बिचार ऐस ठहराई।
बुड्ढा जी सेवा निपुनाई।
गुर नानक इन दरसि कराए।
करि है इहु मनि अनंदु पाए ॥१५॥

बाबा बुड्ढा जी ने आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब को मंजी साहिब पर सुशोभित किया तो गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी को संबोधित करते हुए कहा :

बुड्ढा साहिब खोलहु ग्रिंथ।
लेहु आवाज़ सुनहि सभि पंथ ॥३२॥
अदब संग तबि ग्रिंथ सु खोला।
ले अवाज़ बुड्ढा मुख बोला ॥३३॥

(श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ)

जब आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश हुआ तो पहला हुकमनामा भी बाबा बुड्ढा जी ने संगत को श्रवण करवाया :

सूही महला ५ ॥
संता के कारजि आपि खलोइआ हरि कंमु करावणि आइआ राम ॥
धरति सुहावी तालु सुहावा विचि अंम्रित जलु छाइआ राम ॥
अंम्रित जलु छाइआ पूरन साजु कराइआ सगल मनोरथ पूरे ॥

जै जै कारु भइआ जग अंतरि लाथे सगल विसूरे ॥
पूरन पुरख अचुत अबिनासी जसु वेद पुराणी गाइआ ॥
अपना बिरदु रखिआ परमेसरि नानक नामु धिआइआ ॥ (पन्ना ७८३)

श्री गुरु अरजन देव जी लाहौर रवाना होने लगे तो संगत में ऐलान कर गये कि उनके बाद गुरिआई के उत्तराधिकारी साहिबजादा श्री हरिगोबिंद साहिब होंगे। श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के बाद गुरु-हुक्मानुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गुरिआई पर विराजमान कराने की गुरु-घर की चली आ रही रीति को पांचवीं बार निभाने का सौभाग्य बाबा बुड्ढा जी को प्राप्त हुआ। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने बाबा बुड्ढा जी को दो कृपाणें पेश करने को कहा। गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी के हाथों से मीरी-पीरी की दो कृपाणें धारण कीं ताकि जालिम हकूमत की ज्यादतियों का मुकाबला किया जा सके।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने शहीद गुरु-पिता की इच्छाओं के अनुसार तैयारियां शुरू कर दीं। उन्होंने अकाल बुंगे (श्री अकाल तख़्त साहिब) का निर्माण बाबा बुड्ढा जी तथा भाई गुरदास जी के सहयोग से खुद किया :

किसी राज नहि हाथ लगायो।
बुड्ढे औ गुरदास बनायो। (गुर बिलास पा: ६)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने संगत को फरमान जारी किया कि वे गुरु दरबार में अच्छे शस्त्र, बढ़िया घोड़े तथा अपनी जवानी की भेंटाएं लेकर हाजिर हों। मुगल हकूमत को यह कैसे बर्दाश्त हो सकता था कि कोई उसके समान सरकार बनाकर फरमान जारी करे? इसी लिए गुरु जी को ग्वालियर के किले में कैद कर दिया गया। बाबा बुड्ढा जी ने सतिगुरु की याद को हर समय याद रखने के लिए चौंकी साहिब की रीति श्री हरिमंदर साहिब में चलाई जो आज भी जारी है। माता जी के हुक्म के अनुसार बाबा बुड्ढा जी ग्वालियर गए। जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के दर्शन करने की आज्ञा न हुई तो आप गुरु-यश करते हुए किले की परिक्रमा करने लग पड़े। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ५२ राजाओं समेत ग्वालियर के किले में से रिहा होकर जब श्री अमृतसर आए तो बाबा बुड्ढा जी ने गुरु जी के आने की खुशी में श्री हरिमंदर साहिब में दीपमाला की।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब अपने सपुत्र श्री गुरु तेग बहादर साहिब को उस समय के अध्यापकों में से सबसे प्रौढ़ बाबा बुड्ढा जी के पास लेकर गए। आपने अपने मुखारबिंद से ये वचन किए, "हे जागृत बुजुर्गवार! आपने मुझे विद्या प्रदान करने की भरपूर कृपा की थी, अब आप जी मेरे पुत्र तेग बहादर को विद्या का दान बख्श कर कृतार्थ करें। श्री तेग बहादर साहिब ने बाबा जी के आगे शीश झुकाया जिन्होंने उनको अशीषें दीं तथा शिक्षा प्रदान करने की जिम्मेदारी निभाई।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से आज्ञा लेकर बाबा बुड्ढा जी रमदास आ गए। बाबा बुड्ढा जी अब बहुत बुजुर्ग हो चुके थे। उन्होंने अपना अंतिम समय निकट जानकर गुरु-दर्शन की इच्छा प्रकट की। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब बाबा बुड्ढा जी की विनती प्रवान करके रमदास पहुंचे। बाबा बुड्ढा जी अपने जीवन के अंतिम समय संतुष्टि प्रतीत कर रहे थे। १४ मार्गशीर्ष, संवत् १६८८ को बाबा जी १२५ वर्ष की आयु भोगकर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की मौजूदगी में परलोक गमन कर गए। बाबा जी का अंतिम संस्कार गुरु साहिब ने अपने हाथों से किया :

सिखा उपरि जब ही धरी, साहिब बुड्ढे देह।
हरिगुबिंद के नैन ते, चलयो नीर अति नेह।
(गुर बिलास पा: ६)

फिर वे परिवार को हुक्म मानने तथा संगत

को बाबा बुड्ढा जी के जीवन से प्रेरणा लेने का उपदेश देकर श्री अमृतसर वापिस आ गए।

बाबा बुड्ढा जी के बाद उनके सपुत्र भाई भाना जी ने अपने समकालीन श्री गुरु हरिराय साहिब को, भाई भाना जी के सपुत्र भाई गुरदित्ता जी ने श्री गुरु तेग बहादर साहिब को तथा भाई गुरदित्ता जी के सपुत्र भाई राम कुइर जी ने अपने समकालीन श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को गुरिआई देने की रस्म अदा की। इसके अलावा बाबा बुड्ढा जी के वंशज समय-समय पर गुरमति के प्रचार-प्रसार, प्रबंध, जंगी मुहिमों तथा अन्य कार्यों में भी आगे बढ़कर गुरु-घर की सहायता करते रहे।

भाई भाना जी के परलोक गमन के बाद उनके बड़े सपुत्र भाई जलाल जी ने अपने पिता की जिम्मेदारी संभाली, किंतु उम्र ने ज्यादा देर तक उनका साथ नहीं दिया। लगभग छः माह के बाद वे परलोक गमन कर गए। भाई जलाल जी भी संत-स्वभाव के व्यक्ति थे। भाई जलाल जी के बाद भाई सरवण जी, भाई झंडा जी तथा उनके पश्चात भाई गुरदित्ता जी एवं बाद में भाई राम कुइर जी भी अपनी-अपनी सामर्थ्य एवं समझ के अनुसार गुरु-घर की सेवा करते रहे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा खालसा साजना के साथ सिक्ख लहर में जो मोड़ आया बाबा बुड्ढा जी का खानदान इससे भी पीछे न रहा। इनके खानदान में से भाई राम कुइर जी ने अमृत छका तथा 'सिंघ' सजकर भाई गुरबखश सिंघ बन गए:

गोबिंद सिंघ इह बचन उचारा।
गुरबखश सिंघ है नाम तुमारा।
हमरी तुम सिउ अधिक प्रीत।
दरसन देवहु मुहि नित नीत।४८।

(कवि सौंधा सिंघ)

भाई गुरबखश सिंघ जी की यादगार पाकिस्तान की तहसील शकरगढ़ से २४ किलोमीटर आगे गांव नैनाकोट में बनी हुई है। इस स्थान को 'गुरद्वारा बाबा गुरबखश सिंघ' कहा जाता है। १९४७ ई में हुए देश-विभाजन के बाद इस स्थान पर पाकिस्तान सरकार द्वारा प्राइमरी स्कूल चलाया जा रहा है। गुरद्वारा साहिब की हवेली ढह-ढेरी हो चुकी है, परंतु श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश-स्थान बहुत ही सुंदर बनाया गया है। इस स्थान पर तीन कमरे हैं जिनके सामने एक गोल इमारत है जो एक फुट ऊंचे थड़े पर बनी हुई है। इस इमारत को 'यादगार बाबा गुरबखश सिंघ' कहा जाता है।

भाई गुरबखश सिंघ के सपुत्र भाई मुहर सिंघ तथा भाई अनूप सिंघ थे। भाई मुहर सिंघ नाम-सिमरन के साथ-साथ बदलती परिस्थितियों के अनुकूल घोड़े एवं शस्त्र भी रखने लगे :

मुहर सिंघ गुरिआई पाई।
राज जोग की रीति कमाई।
एक ओर अस्व रंग राते।
एक ओर झूले गज माते।५०।

(कवि सौंधा सिंघ)

अगले उत्तराधिकारी भाई शाम सिंघ जी एक तरफ परमात्मा के भय में रहने वाला नाम-अभ्यासी तथा दूसरी ओर महादानी एवं परोपकारी व्यक्ति थे :

परसुआरथ महि बिकस जान।
परकारज महि निस दिन धिआन।
बैदन ते औखध करवावै।
रोगी जो ता के चल आवे।
दइआ करे ता के बहु देइ।
चंगा करे परम जस लेइ।
जे को खुधिआ अरथी होइ।
ता के भोजन देवे सोइ। *(कवि सौंधा सिंघ)*

इसके पश्चात भाई कान्ह सिंघ के बाद उनके सपुत्र भाई सुजान सिंघ गद्दीनशीन हुए। ये कवि सौंधा सिंघ जी के समकालीन थे। ☸

सेवा के आलोक-स्तंभ भाई घन्हैया जी

-डॉ कश्मीर सिंघ 'नूर'*

यूं तो रैडक्रॉस संस्था का स्थापना काल बीसवीं सदी के पांचवें दशक में द्वितीय विश्व युद्ध के समय हुआ माना जाता है। किंतु इस समय से लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व ही महान् सिक्ख परोपकारी, सेवा के धनी भाई घन्हैया जी ने विश्व की प्रथम कल्याणकारी संस्था 'रैडक्रॉस' की नींव अपने परोपकारी कार्यों द्वारा रख दी थी। यदि यह कहा जाए कि उसी नींव पर ही 'रैडक्रॉस सोसायटी' की स्थापना हुई थी, तो कोई अतिश्योक्ति की बात नहीं है। उन्होंने विश्व को उस मार्ग पर चलने हेतु प्रेरित किया, जिस मार्ग पर चलकर नि:स्वार्थ भावना से, जाति-पाति का, धर्म व संप्रदाय का भेद किए बिना दीन-दुखियों की सच्चे मन से सेवा की जा सकती है और भाईचारा, सद्भावना, प्रेम-प्यार को बढ़ावा दिया जा सकता है। भेदभाव को मिटाया जा सकता है।

गुरबाणी का सच्चे हृदय से सम्मान व इसे प्यार करने वाले भाई घन्हैया जी का जन्म सन् १६४८ ई. में माता सुंदरी की कोख में से पिता श्री नत्थू राम जी के गृह में गांव सौदरा, ज़िला सियालकोट (पाकिस्तान) में हुआ। यह गांव अटक दरिया से कुछ दूरी पर बसा हुआ है। बताते हैं कि इसके सौ द्वार होने के कारण इसका नाम 'सौदरा' प्रसिद्ध हो गया।

भाई घन्हैया जी बचपन से ही परोपकारी एवं दयालु स्वभाव के स्वामी थे। वे अपने घर से जेब में कौड़ियां, रुपए, पैसे आदि भर ले जाते थे और बाहर ज़रूरतमंद लोगों में बांट देते थे। वे किसी का दुख-दर्द सहन नहीं कर सकते थे। गांव के बाहर जरनैली सड़क (मुख्य मार्ग) के किनारे पर पहुंच जाते। यात्रियों का बोझ (सामान) अपने सिर पर उठाते। उन्हें ठिकाने पर पहुंचाकर अपनी जेब में से रुपए-पैसे भी देते। ऐसा महान् व्यक्ति आज तक शायद ही किसी ने देखा हो, जो दूसरों का बोझ उठाकर मंज़िल तक भी पहुंचा दे और अपने पास से धन भी दे। धन्य भाई घन्हैया जी।

उनके माता-पिता जी इस बात को अच्छा नहीं समझते थे कि लोग क्या कहेंगे? रिश्तेदार क्या सोचेंगे? वे नम्रतापूर्वक उत्तर देते, "घरों में बावरे पुत्र भी तो होते हैं। आप मुझे बावरा ही समझ लिया करें।"

लोगों की सेवा करते-करते भाई घन्हैया जी के मन में प्रभु-चरणों में लीन होने की इच्छा जागृत हो उठी। यही इच्छा बाद में श्रद्धा, निष्ठा एवं समर्पण में परिवर्तित हो गई। किसी के द्वारा बताने पर वे लाहौर की ओर चल दिए। अभी लाहौर पहुंचे थे कि पीछे से पिता जी के अकाल चलाना कर जाने का समाचार पहुंच गया। अत: वे वापिस लौट आए। बड़े होने के नाते घर-परिवार की जिम्मेदारी संभाल ली। शाही फौजों को रसद-पानी पहुंचाने वाले पैतृक काम में जुट गए।

*बी-एक्स १२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, फोन : ९८७२२-५४९९०

नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर जी का एक अनन्य सेवक भाई नंनूआ जी औरंगज़ेब के काफिले में रहता था। उससे नवम् पातशाह जी की बाणी श्रवण की। हृदय पर चोट लगी, मन भक्तिमय हो उठा और सब कारोबार छोड़ वनों की ओर चल दिए।

वे भूखे-प्यासे रहकर वनों में विचरण करने लगे। उन्हें एक सिक्ख मिला। उससे परमात्मा को पाने की विधि पूछी। उस सिक्ख ने श्री अनंदपुर साहिब का रास्ता बता दिया। वे संगत के साथ श्री अनंदपुर साहिब में श्री गुरु तेग बहादर जी के पास पहुंच गए। उन्हें आते हुए देख नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर जी ने पानी का घड़ा भर लाने का आदेश दिया। वे पानी का घड़ा भर लाए। गुरु जी थोड़े-से जल से अपने हाथ धोए और शेष जल बहा दिया। उन्हें और जल लाने के लिए कहा। वे फिर पानी का घड़ा भर लाए। गुरु जी ने थोड़े-से पानी से अपने पांव धोए। शेष पानी फिर बहा दिया। इस तरह निरंतर तीन महीनों तक उसी सेवा-भावना की परीक्षा होती रही। भाई घन्हैया जी 'सत्य वचन' कहकर खुशी-खुशी सेवा में लगे रहे। तीन माह के बाद गुरु जी ने अंतिम परीक्षा ली कि अगर आज पानी बहाने पर इस भक्त का मन व्यथित हुआ तो यह भविष्य में सभी को एक समान समझ पानी नहीं पिलाएगा। परंतु परम सेवक भाई घन्हैया जी इस परीक्षा को भी सफलतापूर्वक उत्तीर्ण कर गए।

वे गुरु साहिब जी की सिक्ख संगत तथा गुरु-घर के घोड़ों की सेवा करते रहे। उनकी सेवा गुरु-घर में स्वीकृत हुई। खुश होकर गुरु जी ने कहा, "अब यह दात अन्यों में भी बांटिए!" भाई घन्हैया जी ने ज़िला अटक से कोई बीस कोस दूर 'उरां कण्हे' गांव में धर्मशाला निर्मित की और गुरुओं की पवित्र बाणी का प्रचार किया, प्रवाह चलाया। ११ नवंबर, १६७५ ई को श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी को ज़ालिम औरंगज़ेब के आदेश पर दिल्ली के चांदनी चौक में शहीद कर दिया गया था। उनकी शहादत की खबर पाकर भाई घन्हैया जी उनके बिछोह में बहुत दिनों तक मौन रहे। उन्हें भी अन्य सिक्खों की तरह गहरा सदमा पहुंचा था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने पिता जी की शहादत के बाद सभी सिक्खों को अपने पास बुलवाया। भाई घन्हैया जी भी गुरु जी के पास पहुंच गए। गुरु जी के कहने पर पानी की मशकें भर-भरकर प्यासे लोगों की प्यास बुझाने लगे। प्यासी रूहों को तृप्त कर शांत करने लगे।

भाई घन्हैया जी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के साथ ही श्री अनंदपुर साहिब से श्री पउंटा साहिब में पहुंच गए। वहां पर जब दुश्मनों की सेनाओं के साथ जब युद्धों का सिलसिला चल पड़ा, तब उन्होंने पानी पिलाने की अति कठिन सेवा का जिम्मा संभाल लिया। याद रहे कि विश्व प्रसिद्ध 'रैडक्रॉस सोसायटी' की स्थापना भी द्वितीय विश्व युद्ध की त्रासदी के कारण ही हुई थी। भाई घन्हैया जी, जिन्हें विश्व के महान् मानवतावादी, आध्यात्मिक दार्शनिक कहा जाता है, वे सचाई, शांति के प्रतीक सफैद वस्त्र पहनकर, बाएं हाथ में सफैद झंडा थामे युद्ध में बिना भेदभाव के सभी घायल सैनिकों को पानी पिलाते थे। वे किसी को भी बैरी या बेगाना नहीं समझते थे। उनकी दृष्टि एक सच्चे संत की दृष्टि थी। केवल बातें करने वाले दार्शनिकों व

संतों में से वे नहीं थे। बहुतेरे प्रवचनकर्त्ता स्वयं को बड़े संत समझने का भ्रम पाले रखते हैं व्यवहारिक रूप में कोई भी लोक कल्याण का काम नहीं करते हैं।

सिक्ख योद्धाओं ने देखा कि भाई घन्हैया जी हमारे अलावा विरोधी सैनिकों को भी पानी पिला रहे हैं। कुछेक ने संदेह प्रकट किया कि शायद दुश्मनों ने इन्हें धन दिया होगा। भाई घन्हैया जी के विरुद्ध सिक्खों ने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के पास शिकायत कर दी। गुरु जी ने भाई घन्हैया जी से पूछा, "आप ऐसा क्यों कर रहे हैं?"

भाई घन्हैया जी ने गुरु जी के समक्ष हाथ जोड़कर नम्रतापूर्वक उत्तर दिया, "मेरे सच्चे पातशाह, मैं किसी हिंदू, सिक्ख या मुसलमान को पानी नहीं पिलाता हूं। मैं तो प्रत्येक मनुष्य में आपका ही रूप (छवि) देखता हूं।"

उस सच्चे संत व ब्रह्मज्ञानी जी का उत्तर सुन गुरु जी गद्‌गद् हो उठे। गुरु जी ने खुश होकर मरहम की डिबिया और पट्‌टी भी साथ में दे दी तथा आदेश दिया, "भाई घन्हैया जी आज से मरहम-पट्‌टी की सेवा संभाल लें! पानी पिलाने के साथ-साथ घायलों की मरहम-पट्‌टी भी किया करें!"

गुरु-घर के सच्चे सेवक भाई घन्हैया जी द्वारा रखी गई विश्व की अपनी तरह की प्रथम 'रैडक्रॉस संस्था' की नींव को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने और अधिक मज़बूत कर दिया।

सन् १७०४ ई. में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री अनंदपुर साहिब छोड़ दिया। भाई घन्हैया जी उरां कप्हे गांव में पुन: चले गए। यहां पर भाई सेवा राम जी उनके पास आ गए। आगे भाई सेवा राम जी के शिष्य व सेवक भाई अड्‌डण शाह जी बने। भाई घन्हैया जी तो दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के बहुत प्रिय सिक्ख बन चुके थे। भाई घन्हैया जी द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलकर प्रत्येक सिक्ख गुरु का प्यारा सिक्ख बन सकता है। ऐसे ही गुरु के प्यारे सिक्ख थे, महान् समाज सेवक भक्त पूर्ण सिंघ जी पिंगलवाड़ा के संस्थापक।

सन् १७१२ ई. में एक बार भाई घन्हैया जी विरोधी सैनिकों के घेरे (चंगुल)में फंस गए। एक सैनिक भाई साहिब पर हाथ उठाने लगा तो उसे भाई घन्हैया जी अकेले नहीं, बल्कि उनके पीछे फौजों का लश्कर दिखाई दिया। डर के मारे सभी विरोधी सैनिक भाग खड़े हुए।

परम ब्रह्मज्ञानी, महान् परोपकारी, सेवा सुमिरन की मूर्ति भाई घन्हैया जी गुरबाणी के रसिया थे। गुरबाणी का आदर करने वाले थे। अपना अंतिम समय निकट आया जानकर १७१८ ई. में उरां कप्हे गांव में प्रतिदिन गुरबाणी का कीर्तन श्रवण करते रहते थे। श्वास त्यागे जाने के मौके पर भी एक स्तंभ के साथ पीठ टिकाए बैठे कीर्तन सुन रहे थे। कीर्तन की समाप्ति पर भी जब उनकी समाधि न टूटी, तब संगतों द्वारा हिलाए जाने पर पता चला कि वे तो सचखंड में गुरु के चरणों में विराजमान हो चुके हैं।

परम पिता परमात्मा की ज्योति में एक परम ब्रह्मज्ञानी की ज्योति विलीन हो चुकी थी।



प्रभु-सुमिरन द्वारा वर्तमान की संभाल

*-स. जसपाल सिंघ**

आज के समय में मनुष्य या तो भूतकाल की बातों को याद कर जीवन बिता रहा है या अपने आने वाले समय को संवारने की योजनायें बनाने में समय बिता रहा है।

मनुष्य चाहता है कि मेरा भूतकाल जैसे बीत चुका है वैसे मेरा भविष्य भी और अच्छा बीते। मेरे बीते हुए कल से बहुत अच्छा समय आने वाला व्यतीत हो, इसी में मनुष्य जी रहा है। मनुष्य को चिंता है आने वाले कल की, अपने भविष्य को संवारने एवं अपनी आने वाली पीढ़ी जो कि अभी पैदा भी नहीं हुई, उसकी चिंताओं को मन में बैठाकर अपने वर्तमान को भूल ही गया। अपने इस जीने के ढंग के कारण मनुष्य ने अपने सुंदर वर्तमान को सोचों-विचारों में बिताकर अपने इस सुंदर मानवीय जीवन को नरक बना लिया है अर्थात् चिंताओं का एक अथाह समुद्र अपने हृदय में बना लिया है। सतिगुरु जी ने बाणी में स्पष्ट शब्दों में समझाया है :

नानक चिंता मति करहु चिंता तिस ही हेइ ॥
जल महि जंत उपाइअनु तिना भि रोजी देइ ॥
(पन्ना ९५५)

किंतु मनुष्य को परमात्मा पर जैसे भरोसा ही नहीं रहा। उसकी सोच केवल यहीं तक सीमित रह गयी है कि जो कुछ भी हो रहा है वह सब मेरी वजह से ही हो रहा है, जो भी धन कमाया है वो मैंने ही कमाया है, जो भी आगे करूंगा वो मैं ही करूंगा, मेरी वजह से ही सब कुछ होगा। जो परिवार है, कुटुंब है, रिश्तेदार हैं, मित्र हैं, सब मेरी ही देन है। जो भी व्यापार कर रहा हूं या जो भी कार्य कर रहा हूं सब कुछ मैं ही कर रहा हूं। मनुष्य इसी सब में अपने अमूल्य समय को भविष्य की योजनायें बनाने में बिता रहा है। उसे हमेशा इसी बात की चिंता सताती है कि मेरा आने वाला कल सुखदायी, फलदायी, आनंदमयी कैसे बीते। इसी को सोच-सोचकर अपने वर्तमान के भाव अपने इस मनुष्य जीवन को रोगी-सोगी बनाकर चिंता से ग्रस्त होकर खुद को बीमार कर लेता है और वर्तमान में जीना भूलकर अपने अमूल्य जीवन को नरक के समान दुखी बना लेता है। यह भूल ही जाता है कि यह अमूल्य मनुष्य जीवन किस लिए प्राप्त हुआ। श्री गुरु अरजन देव जी महाराज फरमान करते हैं :

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥
सरंजामि लागु भवजल तरन कै ॥
जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै ॥ (पन्ना १२)

जिस मनुष्य जीवन की हमने कीमत नहीं जानी वो तो अमोलक है। पिछले किए गए अच्छे कर्मों की वजह से परमात्मा ने कृपा करके हमें यह मनुष्य जीवन दिया है। हमें पता ही नहीं कि हम कौन हैं, हमारा क्या परिचय है, हमारी क्या पहचान है? क्या हमारे द्वारा रख लिए गए शुभ नाम से ही हमारा परिचय है? सतिगुरु जी बाणी में फरमान करते हैं :

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु ॥
मन हरि जी तेरै नालि है गुरमती रंगु माणु ॥
(पन्ना ४४१)

*C/O भारती सेल्स कार्पोरेशन, गांधी नगर, महोबा- २१०४२७ (उ. प्र.)

हमें तो लोग तब तक हमारे नाम से जानेंगे जब तक हमारे शरीर में प्राण हैं, जो मिट्टी, पानी, हवा, आकाश और अग्नि से हैं। जब इस नाशवान देही में से प्राण निकले फिर तो यह मिट्टी ही हो जायेगी। हमने कभी सोचा कि हम अपना सारा जीवन चिंताओं में क्यों बिता रहे हैं? चिंता ही एक ऐसी बीमारी है जो हमारे शरीर को खा जाती है। हम अपने आप को बीमारियां लगा लेते हैं और अपना सारा धन इलाज में दवाइयों पर खर्च कर देते हैं। क्या हमने कभी यह जानने की कोशिश की कि यह मनुष्य जीवन किस लिए मिला है? जिस तरह एक मछली, जिसका जीवन पानी है, पानी में से निकाल देने पर तड़प-तड़पकर अपने प्राण त्याग देती है और यहां तक कि जो भी मछली का सेवन करता है, उसे भी खूब प्यास लगाती है। इससे यह संकेत लिया जा सकता है कि मछली मर कर भी पानी को नहीं बिसारती। हम भी परमात्मा से इतना प्यार करें, ऐसा महसूस होने लगे कि हे अकाल पुरख वाहिगुरु! हमारे जीवन में ऐसा कोई पल न आये जब हम तेरी याद को अपने मन से भुला दें। तेरी याद के बिना जीने से पहले ही हमें मौत दे देना।

परमात्मा के सुमिरन के बिना जो समय हम बिताते हैं सच तो यह है कि प्राणों के चलते भी शरीर के पटल पर वह समय मरे हुए व्यक्ति के समान है। संसार में हम शारीरिक रूप में तो विचर रहे होते हैं मगर आत्मिक रूप से हम जी नहीं रहे होते क्योंकि आत्मा की खुराक है-- प्रभु का सुमिरन, प्रभु की बंदगी, सतिसंगत, जो हम उसको नहीं दे पा रहे हैं। हम जिस कारण से अपनी आत्मा को खुराक नहीं दे पा रहे हैं; उसका मुख्य कारण भी यही है कि हम वर्तमान में न जीकर भविष्य की चिंताओं में जी रहे हैं। जिस तरह से पेट को भूख लगने पर हम भोजन ग्रहण करते हैं उसी तरह हम यह लक्ष्य बनाएं कि अपनी आत्मा को भी भजन, बंदगी, सतिसंग, कीर्तन, सुमिरन रूपी खुराक अवश्य दें, तभी प्रभु परमात्मा की हम पर कृपा होगी :

नानक की अरदास सुणीजै ॥
केवल नामु रिदे महि दीजै ॥ (पन्ना ३८९)

वास्तव में हमने अपने मन में कुछ गलत धारणाओं को जन्म दे रखा है कि स्वर्ग और नरक मौत के बाद की प्राप्ति है जबकि यह हमारी भूल है वास्तव में परमात्मा की याद के बिना बिताया समय ही नरक के समान है। हमारे जीवन जीने का आधार होना चाहिए प्रभु का सुमिरन। ❋

अनुरोध

'गुरमति ज्ञान' सिक्ख इतिहास तथा गुरबाणी में दर्ज शिक्षाओं द्वारा मानव समाज का मार्गदर्शन करती धार्मिक पत्रिका है। गुरबाणी के सम्मान को मुख्य रखते हुए 'गुरमति ज्ञान' के पाठक साहिबान से अनुरोध है कि वे 'गुरमति ज्ञान' को पढ़ने के बाद इसे न तो रद्दी में बेचें तथा न ही ऐसी जगह पर रखें जहां इसकी उचित संभाल न हो सके। पत्रिका को यदि घर में संभालकर रखने की उचित व्यवस्था न हो तो पढ़ने के बाद इसे किसी मित्र, रिश्तेदार आदि को दे दें अथवा किसी गुरुद्वारा साहिबान या पुस्तकालय में पहुंचा दें।

-संपादक।

कविताएं

मुक्ति का द्वार गुरु ग्रंथ साहिब

-डॉ कशमीर सिंघ 'नूर'*

अकाल पुरख का ज्योति स्वरूप है यह,
ओअंकार का दीदार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
इसकी कृपाओं का शुमार है अनगिनत,
रहमतों का भंडार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
इसके सहारे बिना हमारा जीवन अधूरा,
जीवन का आधार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
वाहिगुरु नाम जहाज़ है, रखवाला है,
मुक्ति का द्वार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
हमें अपने चरणों में जगह है देता,
करता अति प्यार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
गुरबाणी पढ़े-सुने बिना मन भटकता,
हां, साक्षात् करतार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
धन, बेटियां, बेटे, कारोबार करे बख़्शिश,
बख़्शिशों का भंडार है, गुरु ग्रंथ साहिब।

मुश्किल समय हम पर आने न दे,
सच्चा परवरदिगार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
है दिव्य प्रकाश, ज्ञान का है सागर,
गुरमति का मीनार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
सब जीवों पर मेहर के मेघ बरसाए,
सब पर करे उपकार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
सभी द्वार छोड़ इसकी शरण में आओ,
मुक्ति का द्वार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
इसकी आन, बान, शान सबसे ऊंची,
करे कृपा अपार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
जिज्ञासुओं की हर जिज्ञासा शांत करे,
सच्चा मददगार है, गुरु ग्रंथ साहिब।
शबद ही गुरु है हमारा न कोई और,
परमात्मा का प्यार है, गुरु ग्रंथ साहिब।

*बी-एक्स १२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, फोन : ९८७२२-५४९९०

अपना गुलशन तुम्हीं संवारो

ओ जग को रचने वाले,
कैसा है तेरा गुलशन?
कुछ ही फूल महकते हैं,
कांटों में उलझे दामन।
ऐ गुलशन के मालिक तुमने,
रक्खे कैसे माली?
खुद ही महक चुराते हैं,
गुलशन खुशबू से ख़ाली।

माली खुद को मालिक समझें,
इसमें है तेरा अपमान।
दागदार वे करते गुलशन,
करते हैं तुझको बदनाम।
फिर से आकर तुम्हीं संवारो,
अपने हाथों यह गुलशन।
फूलों से हो पवन महकती,
कांटों में हो मधुर चुभन।

-श्री प्रशांत अग्रवाल, ४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ प्र)। मो : ०९४११६०७६७२

गुरबाणी चिंतनधारा : ९४

सुखमनी साहिब : विचार व्याख्या

*–डॉ. मनजीत कौर**

सलोकु ॥ गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु ॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु ॥१॥
(पन्ना २९३)

२३वीं असटपदी के सलोक में पंचम पातशाह ने गुरु द्वारा प्राप्त अंजन से अज्ञानता के अंधेरे की विनिष्टता एवं हृदय में ज्ञान के प्रकाश होने के गूढ़ रहस्य को समझाया है। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि जिस इन्सान को गुरु ने ज्ञान का सुरमा बख्शा, तो उसके अज्ञानता के अंधेरे का विनाश हो गया। प्रभु की रहमत से मेरा मिलाप संत पुरुष अर्थात् पूर्ण गुरु से हो गया, जिसके फलस्वरूप हे नानक! मेरा मन ज्ञान से भरपूर हो अलौकिक हो गया।

गुरबाणी में गुरु को परमेश्वर के समान माना गया है। भक्त कबीर जी ने तो गुरु को परमेश्वर से भी बड़ा और श्रेष्ठ माना है क्योंकि उनका चिंतन यह दर्शाता है कि परमेश्वर के नाराज़ हो जाने पर हमारे पास गुरु है जो वापिस सही मार्ग दर्शन करके प्रभु से मिलवा देगा लेकिन अगर कहीं गुरु ही नाराज़ हो गया अर्थात् रूठ गया तो मिलाप करवाने के सारे मार्ग ही बंद हो जायेंगे। भक्त कबीर जी की बाणी है :

हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर।
अर्थात् गुरु के रूठने पर जीव का कोई ठिकाना नहीं।

गुरु शब्द गु+रु के मेल से बना है "गु" अर्थात् अंधकार "रु" अर्थात् प्रकाश। अत: स्पष्ट है जो अंधकार से उजाले की ओर ले जाए, अज्ञान से ज्ञान तथा नश्वरता से अमरता की ओर ले जाए, वही गुरु है। इसलिए गुरबाणी में गुरु के बिना जीवन को अज्ञान से ग्रसित अंधकारमय माना गया है, जिसे किसी भी तरह जीवन की युक्ति समझ नहीं आ सकती। श्री गुरु अंगद देव जी इस संदर्भ में फरमान करते हैं :

गुर बिनु घोरु अंधारु गुरू बिनु समझ न आवै ॥
गुर बिनु सुरति न सिधि गुरू बिनु मुकति न पावै ॥ *(पन्ना १३९९)*

गुरु पातशाह यह भी स्पष्ट करते हैं कि बेशक प्रकाश के स्रोत चंद्रमा और सूरज सैंकड़ों एवं हज़ारों की संख्या में प्रकाशित हो जाएं इतने प्रकाश के बावजूद भी अंत:करण में गुरु के बिना अंधेरा ही अंधेरा है यथा गुरबाणी प्रमाण :

जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार ॥
एते चानण होदिआं गुर बिनु घोर अंधार ॥
(पन्ना ४६३)

गुरु नानक पातशाह की प्रमुख बाणी "आसा की वार" की प्रारंभता ही गुरु पर बलिहार जाते हुए की है क्योंकि गुरु मनुष्य को देवता करने की क्षमता रखता है, इसलिए गुरु पातशाह एक दिन में सैंकड़ों बार गुरु से बलिहार (कुर्बान) होने की पावन भावना एवं गुरु के प्रति श्रद्धा अभिव्यक्त करते है यथा :

बलिहारी गुर आपणे दिउहाड़ी सद वार ॥

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९०-६२५२३*

जिनि माणस ते देवते कीए करत न लागी वार ॥
(पन्ना ४६२)

वास्तव में गुरु पारस है जो मनुष्य उसकी संगत पा लेता है वह कंचन हो जाता है, उसकी शरण लोहे को सोना ही नहीं बनाती बल्कि उसके समस्त अवगुण दूर कर पारस ही बना देती है। शर्त मात्र यह है कोई शुद्ध हृदय से उसकी शरण में आ जाए, गुरबाणी प्रमाण :

सतिगुर की जे सरणी आवै फिरि मनूरहु कंचनु होहा ॥
सतिगुरु निरवैरु पुत्र सत्र समाने अउगण कटे करे सुधु देहा ॥ *(पन्ना ९६०)*

अत: गुरबाणी ज्ञान रूपी अंजन देने वाले समर्थ गुरु पर बलिहार जाने को प्रेरित करती है यथा :

ऐसे गुर कउ बलि बलि जाईऐ आपि मुकतु मोहि तारै ॥१॥ रहाउ ॥
कवन कवन कवन गुन कहीऐ अंतु नही कछु पारै ॥ *(पन्ना १३०१)*

इस संदर्भ में यह भी स्पष्ट कर देना जरूरी है कि वर्तमान में हमारे गुरु युगों-युग अटल 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' हैं जो सम्पूर्ण मानवता का मार्गदर्शन करने में समर्थ हैं। अत: हमें पावन ग्रंथ की बाणी से ही दिशा-निर्देश लेकर जीवन में विचरण करना है ताकि हमारे अंत:करण में ज्ञान का प्रकाश हो और हम नेक रास्ते पर चलते हुए अपना लोक-परलोक सफल बना सके।

असटपदी ॥
संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा ॥
नामु प्रभू का लागा मीठा ॥
सगल समिग्री एकसु घट माहि ॥
अनिक रंग नाना द्रिसटाहि ॥
नउ निधि अम्रितु प्रभ का नामु ॥
देही महि इस का बिस्रामु ॥
सुंन समाधि अनहत तह नाद ॥
कहनु न जाई अचरज बिसमाद ॥
तिनि देखिआ जिसु आपि दिखाए ॥
नानक तिसु जन सोझी पाए ॥१॥

२३वीं असटपदी में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने सत्संगत की महत्ता दर्शायी है, जिसमें आकर हृदय में हरि का नाम मीठा लगने लगता है। प्रभु-नाम में ही सभी बरकतें रिद्धियां-सिद्धियां तथा अमृत का सागर समाहित है; अनहत नाद भी अंत:करण में बजते सुनाई देने लगते हैं; जिसे प्रभु रहमत करके नाम का ख़ज़ाना बख़्श देता है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि जिस जीव ने गुरु की संगत में रहकर अपने अंत:करण में अकाल-पुरख के दीदार किए हैं उसे परमेश्वर का नाम मीठा लगने लगा है अर्थात् जिसे अपने अंदर हृदय घर में ही प्रभु के दर्शन होने लगे, उसे ही परमेश्वर का नाम प्यारा लगता है। संसार के समस्त पदार्थ उसे प्रभु में ही लीन दिखाई देते हैं। उस परमेश्वर से ही अनेक कौतुक (रंग-तमाशे) निकले दिखाई देते हैं। परमेश्वर का नाम नौ निधियों एवं अमृत के समान है और यह (अनमोल ख़ज़ाना) मनुष्य के हृदय घर में ही है। ऐसे मनुष्य के अंदर सुन्न समाधि की अवस्था स्वत: ही बन जाती है तथा अनहत नाद बजते रहते हैं। ऐसे अश्चर्यजनक कौतुकों को शब्दों द्वारा कोई बयान नहीं कर सकता क्योंकि आनंद एक अवस्था है जिसे प्राप्त करने वाला अनुभव तो करता है लेकिन बयान नहीं कर सकता। ये आश्चर्य कौतुक वही देखने में समर्थ होता है जिसे वह प्रभु आप ही दिखाता है। गुरु

पातशाह कथन करते हैं कि उपरोक्त आनंद की अवस्था तक वास्तव में वही पहुंचते हैं जिन्हें वह मालिक आप समझ बख्शता है अर्थात् यह ज्ञान बख्शता है कि प्रभु परमेश्वर हमारे अंत:करण में हमेशा से बसा हुआ है। इसी सूझ की बदौलत वह आश्चर्यजनक कौतुकों को अपने अंदर ही अनुभव करता रहता है।

वस्तुत: पारब्रह्म परमेश्वर अंत:करण में ही समाया हुआ है और उस परमेश्वर का नाम भी अंदर ही है। पूर्ण गुरु जीव को यह युक्ति समझाता है कि किस प्रकार उसे अंदर ही खोजना है, जैसा कि गुरबाणी का पावन संदेश है :

बंदे खोजु दिल हर रोज ना फिरु परेसानी माहि ॥
(पन्ना ७२७)

समस्त चिंताओं से मुक्त होने का एक ही साधन है और वह है अंदर की खोज। इसके विपरीत बाहरमुखी खोज या बाहर का पुस्तकीय ज्ञान तो मनुष्य को वाद-विवाद में डाल देता है यथा :

दरोगु पड़ि पड़ि खुसी होइ बेखबर बादु बकाहि ॥
(पन्ना ७२७)

अंदर की खोज से सहज ही मिल जाने वाले परमेश्वर का निवास जब बाहर अंदर जर्रे-जर्रे में दिखाई देने लगता है तो भक्त पुकार उठता है अपनी प्रसन्नता को जैसे भक्त नामदेव जी ने अभिव्यक्त किया है यथा :

हले यारां हले यारां खुसिखबरी ॥
बलि बलि जांउ हउ बलि बलि जांउ ॥
नीकी तेरी बिगारी आले तेरा नाउ ॥
(पन्ना ७२७)

सर्वत्र परमेश्वर के दीदार की सहज अवस्था ही असल में योग साधना-समाधि, संपूर्ण खंड-ब्रह्मांड नौ निधियों के भरपूर नाम सब कुछ भीतर ही है और यह भीतर अंदर की साधना ही असल साधना है, बाहर के उपक्रमों को गुरबाणी में कर्मकांड की संज्ञा से अभिहित किया गया है। गुरबाणी आशयानुसार सब कुछ कैसे अंदर ही समाया हुआ है :

इसु काइआ अंदरि नउखंड प्रिथमी हाट पटण बाजारा ॥
इसु काइआ अंदरि नामु नउ निधि पाईऐ गुर कै सबदि वीचारा ॥
काइआ अंदरि तोलि तुलावै आपे तोलणहारा ॥
इहु मनु रतनु जवाहर माणकु तिस का मोलु अफारा ॥
मोलि कित ही नामु पाईऐ नाही नामु पाईऐ गुर बीचारा ॥ (पन्ना ७५४)

अत: स्पष्ट है जीव का यह मन रत्न, जवाहर और माणिक के समान है, यह बेशकीमती है। लेकिन नाम को किसी कीमत से नहीं अपितु इसे गुरु के पावन उपदेश से ही पाया जा सकता है।

गुरबाणी हमें अंदर की साधना-भक्ति के लिए प्रेरित करती है, बाहरी ज्ञान तुच्छ एवं निरर्थक ही है, जैसा कि आम प्रचलित कथन है :

पड़ पड़ किताबा दे लाए ढेर
बाहर चानणा ते अंदर अंधेर।

सब कुछ घर में है बाहर नहीं! बाहर तो केवल भटकाव है लेकिन यह अंदर का ज्ञान गुरु कृपा से ही संभव है यथा श्री गुरु रामदास जी की पावन बाणी प्रमाण है :

गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥
(पन्ना १२४)

वस्तुत: प्रभु कृपा से पूर्ण गुरु की प्राप्ति

और पूर्ण गुरु की कृपा से अंतर बसते प्रभु से मिलाप सहज ही हो जाता है।

सो अंतरि सो बाहरि अनंत ॥
घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत ॥
धरनि माहि आकास पइआल ॥
सरब लोक पूरन प्रतिपाल ॥
बनि तिनि परबति है पारब्रहमु ॥
जैसी आगिआ तैसा करमु ॥
पउण पाणी बैसंतर माहि ॥
चारि कुंट दह दिसे समाहि ॥
तिस ते भिंन नही को ठाउ ॥
गुर प्रसादि नानक सुखु पाउ ॥२॥ (पन्ना २९३)

२३वीं असटपदी की दूसरी पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह जी ने परमेश्वर की सर्वव्यापकता का विश्वास दिलाते हुए कलयुगी जीवों को यह तथ्य समझाया है कि वह परिपूर्ण अकाल पुरख प्रकृति के कण-कण में समाया हुआ है कि एक तिल मात्र भी ऐसा स्थान या प्रकृति की कोई भी वस्तु, जर्रा ऐसा नहीं जिसमें उस पारब्रह्म परमेश्वर की विद्यमानता न हो लेकिन इस निश्चय को बनाने वाला और इसके फलस्वरूप मिलने वाला आनंद गुरु कृपा से ही मुमकिन (संभव) है।

गुरु पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि सर्वव्यापी पारब्रह्म परमेश्वर ही अंदर, बाहर अनंत रूपों में समाया हुआ है। प्रत्येक घट (शरीर) में वह आप व्याप्त है। धरती, आकाश एवं पाताल में समस्त लोकों में बसा हुआ है और समस्त लोकों के जीवों की प्रतिपालना करता है। वह प्रभु जंगलों में तिनके में एवं पर्वतों में भी रचा बसा हुआ है। उस मालिक की जैसी आज्ञा होती है जीव वैसे ही कार्य करता है अर्थात् उस परमेश्वर के आदेशानुसार जीव कर्म में प्रवृत्त होते हैं। वह प्रभु हवा, पानी, अग्नि, चारों कोनों और दसों दिशाओं में समाया हुआ है। कोई भी स्थान उस हरि के बिना नहीं है। गुरु पंचम पातशाह अंतिम पंक्ति में इस तथ्य को उजागर करते हैं कि (उस परमेश्वर की सर्वव्यापकता के विश्वास का) आनंद गुरु कृपा से ही मिलता है।

वस्तुत: वह परमेश्वर जल-थल, आकाश-पाताल जर्रे-जर्रे में समाया हुआ है कोई जीव या प्रकृति का कोई दृश्य उस हरि की मौजूदगी के बिना नहीं हो सकता इसकी कल्पना भी मूर्खता है। लेकिन वह परमात्मा हर जन, हर कण में समाया हुआ है इस तथ्य का उजागर होना, इस पर दृढ़ विश्वास होना और उसके फलस्वरूप मिलने वाला आनंद केवल गुरु कृपा पर निर्भर करता है।

ईश्वर की सर्वव्यापकता का बोध हमें गुरबाणी में बार-बार होता है और वैसे भी जीवन में अनेक उदाहरण हमें उस प्रभु की मौजूदगी का एहसास और भरोसा दिलवाते रहते हैं। वाहिगुरु की सर्वव्यापकता के कतिपय उदाहरणों द्वारा समझने का प्रयास करें कि वह अकाल पुरख कैसे हर स्थान एवं दिशा में जड़ और चेतन में सूक्ष्म एवं स्थूल में सर्वत्र समाया हुआ है यथा श्री गुरु रामदास जी की पावन बाणी प्रमाण है :

तूं घट घट अंतरि सरब निरंतरि जी हरि एको पुरखु समाणा ॥ (पन्ना ११)

गुरु पातशाह की बाणी में अन्यत्र भी इसी भाव के दर्शन होते हैं। यथा:

जह जह देखा तह तह सुआमी ॥
तू घटि घटि रविआ अंतरजामी ॥ (पन्ना ९६)

गुरु पातशाह गुरबाणी में यह भी स्पष्ट कर रहे हैं कि उसी की सर्वव्यापकता का

एहसास भी उसी की अर्थात् गुरु की अर्थात् गुरु की कृपा से संभव है यथा :

तू घटि घटि इकु वरतदा गुरमुखि परगड़ीऐ ॥
तू सचा सभस दा खसमु है सभ दू तू चड़ीऐ ॥
(पन्ना ३०१)

इस प्रकार हर स्थान पर व्यापक प्रभु समस्त जीवों की प्रतिपालना करने वाला है सारी सृष्टि खंड-ब्रह्मांड प्रकृति का कण-कण उसके हुक्म में ही कार्यशील है। जैसा कि श्री गुरु नानक पातशाह ने इस तथ्य को पावन पंक्ति द्वारा उजागर किया है कि सब कुछ उसके हुक्म में घटित हो रहा है, उसके हुक्म के बाहर कुछ भी नहीं, जो उसके हुक्म को गुरु कृपा से समझ लेते हैं वो अहंकार की कोई बात ही नहीं करते और इस अहंकार से रहित हो जाना ही जीवन का परम लक्ष्य और परम आनंद है यथा गुरबाणी प्रमाण :

हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ ॥
नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ॥
(पन्ना १)

बेद पुरान सिंम्रिति महि देखु ॥
ससीअर सूर नख्यत्र महि एकु ॥
बाणी प्रभ की सभु को बोलै ॥
आपि अडोलु न कबहू डोलै ॥
सरब कला करि खेलै खेल ॥
मोलि न पाईऐ गुणह अमोल ॥
सरब जोति महि जा की जोति ॥
धारि रहिओ सुआमी ओति पोति ॥
गुर परसादि भरम का नासु ॥
नानक तिन महि एहु बिसासु ॥३॥

गुरु पातशाह उपरोक्त पउड़ी में यही तथ्य उजागर कर रहे हैं कि समस्त धर्म ग्रंथों में यही ज्ञान समाया हुआ है कि सूर्य, चांद, सितारे प्रकृति के समस्त नज़ारों में वही एक पारब्रह्म प्रभु समाया हुआ हैं। वह अटल है लेकिन संपूर्ण कलाओं में आप ही अनेक खेल खेलता है। ताने पेटे की तरह सब का आधार है। गुरु कृपा से हर तरह के भ्रम विनिष्ट हो जाते हैं और ईश्वर की सर्वव्याकता का दृढ़ विश्वास हो जाता है।

गुरु पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि वेदों, पुराणों एवं, स्मृतियों में देखो अर्थात् इन ग्रंथों को पढ़कर देख लो। चाहे चंद्रमा, सूर्य एवं सितारों को देख लो सब में वही एक परमेश्वर समाया है। प्रत्येक जीव उस निरंकार की ही बोली बोलता है अर्थात् सब जीवों में वही प्रभु आप ही बोल रहा है परंतु सब में मौजूद होते हुए भी वह अडोल है, अडिग है। कभी विचलित नहीं होता। संपूर्ण शक्ति का मालिक अनेक कौतुक रचकर उसमें स्वयं ही खेल रहा है। वह परमेश्वर अमूल्य (बेशकीमती) गुणों का मालिक है, उसका मूल्य आंका नहीं जा सकता। उस प्रभु की ज्योति समस्त प्राणियों में जगमग कर रही है। वह मालिक ताने-बाने की तरह सबको सहारा (आश्रय) दे रहा है। गुरु की (अपार) कृपा से वहमो-भ्रमों का विनाश हो जाता है तथा गुरु पातशाह के चिंतनानुसार ईश्वर की सर्वव्यापकता का अटूट विश्वास ऐसे ही जीवों को बनता है जो गुरु कृपा के वहमों-भ्रमों से मुक्त हो जाते हैं।

वस्तुत: सभी धर्म ग्रंथ तथा प्रकृति का कण-कण उसी मालिक की गौरव-गाथा का मान कर रहा है। वह संपूर्ण शक्तियों का मालिक है, वह जैसा चाहे वही जगत रचना रचता है। अपने बनाए जीवों में प्रकृति में सर्वत्र आप ही समाया हुआ अपने ही बनाए कौतुकों को देख रहा है और दृश्यों का आनंद

भी ले रहा है। निर्गुण एवं सगुण समस्त रूपों में आप ही समाया हुआ है, सब में उसी का नूर समाया है यथा गुरबाणी में अनेक स्थानों पर उसकी ज्योति के प्रसार का वर्णन मिलता है, कतिपय उदाहरणों से इसे समझने का यत्न कर सकते हैं। गुरु नानक पातशाह जी की पावन बाणी में भी इसी भाव के दर्शन होते हैं।

सभ महि जोति जोति है सोइ ॥
तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥
(पन्ना १३)

इसी संदर्भ में भक्त नामदेव जी की बाणी है :

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै ॥
राम बिना को बोलै रे ॥१॥ (पन्ना ९८८)

भक्त कबीर जी की बाणी भी यहां उल्लेखनीय है :

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ (पन्ना १३४९)

लेकिन इस संदर्भ में यहां विचारणीय तथ्य यह है कि बेशक सभी धर्मों के लोगों के पास अपने-अपने धर्म ग्रंथ हैं, सभी ग्रंथ महान हैं, उनमें ज्ञान छिपा है, लेकिन जब तक गुरु कृपा से हमारे अंत:करण के वहमों-भ्रमों का जाल नहीं हटता तब तक नेत्रों के होते हुए भी अंधे हैं, कानों के होते हुए भी बहरे हैं, जीभ के होते हुए भी गूंगे हैं, हाथ-पैरों के होते हुए भी अपाहिज हैं, यह कड़वा सच है जब तक इन धर्म ग्रंथों को पढ़-सुनकर भी हम वहमों-भ्रमों से मुक्त नहीं होंगें तब तक हम ईश्वर की सर्वव्यापकता के बोध से अनभिज्ञ रहेंगे और जीवन मार्ग से भटककर कामयाबी की मंज़िल को हासिल करने में असमर्थ रहेंगे, इसलिए धर्म ग्रंथों को पढ़ना-सुनना सीढ़ियां हैं, जिसके द्वारा सही दिशा में चलकर कामयाबी की मंज़िल प्राप्त की जा सके और वह है गुरु उपदेश पर अमल करना। इस संदर्भ में एक रोज़मर्रा की ज़िंदगी का उदाहरण देकर गुरबाणी में बहुत सुंदर समझाया है कि जिस प्रकार स्वादिष्ट भोजन में पड़ी हुई कड़छी भोजन का स्वाद नहीं जान सकती उसी प्रकार केवल ज्ञान की बातें करके प्रेम के स्वाद से जो विहीन रहते हैं। गुरु पंचम पातशाह निवेदन करते हैं कि हे वाहिगुरु जी! मुझे ऐसे लोगों के दर्शन नसीब हों जो तेरे नाम के प्रेम रस में लीन रहते हैं :

कड़छीआ फिरंन्हि सुआउ न जाणन्हि सुञीआ ॥
सेई मुख दिसंन्हि नानक रते प्रेम रसि ॥
(पन्ना ५२१)

अत: गुरु कृपा से ही कर्मकांडों जीवन से मुक्ति मुमकिन है। वहमों-भ्रमों के मक्कड़जाल में उलझा व्यक्ति ना अपना और न ही किसी और का भला कर सकता है। गुरबाणी हमें वहमों-भ्रमों से बचाकर ईश्वर से जोड़ती है और एक भरोसा उसकी सर्वव्यापकता का एहसास एवं विश्वास लोक-परलोक सफल बना देता है :

संत जना का पेखनु सभु ब्रहम ॥
संत जना कै हिरदै सभि धरम ॥
संत जना सुनहि सुभ बचन ॥
सरब बिआपी राम संगि रचन ॥
जिनि जाता तिस की इह रहत ॥
सति बचन साधू सभि कहत ॥
जो जो होइ सोई सुखु मानै ॥
करन करावनहारु प्रभु जानै ॥
अंतरि बसे बाहरि भी ओही ॥
नानक दरसनु देखि सभ मोही ॥४॥

चौथी पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह जी

उस मालिक की सर्वव्यापकता एवं जीव की कर्त्तव्य, निष्ठा को उजागर करते हुए संत जनों की उच्चावस्था को बयान करते हैं और उनके दर्शनों से जीव विमोहित रहते हैं।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि संत जनों को सर्वत्र अकाल पुरख परमेश्वर ही दिखते हैं अर्थात् संतों की हर जीव में हर कण में पारब्रह्म प्रभु के ही दीदार होते हैं। उनके हृदय घर में 'सदैव' ख़्याल धर्म के ही उठते हैं अर्थात् उनके हृदय में समस्त धर्मों का ज्ञान समाहित होता है। संत जन शुभ वचन अर्थात् हरि के वचन ही सुनते हैं तथा सर्वव्यापक प्रभु में ही लीन रहते हैं। जिसने भी ईश्वर की सर्वव्यापकता का ज्ञान हासिल कर लिया उसकी रहनी इस प्रकार की हो जाती है कि वह साधु जन सदैव सत्य वचन ही बोलता है। ऐसे साधु जन जो कुछ भी ईश्वर द्वारा होता है उसे भला ही मानते है अर्थात् वे परमेश्वर की रज़ा (हुक्म) में प्रसन्न रहते हैं। वे सर्वस्व का कर्त्ता अर्थात् सब कुछ करने एवं करवाने वाला उसी करतार को ही मानते हैं। (संत जनों के लिए) तो अंदर बाहर (सर्वत्र) वही प्रभु समाया हुआ है। गुरु पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि (अकाल पुरख परमेश्वर) के दर्शन सबको विमोहित करने वाले हैं अर्थात् प्रभु का सर्वव्यापी रूप सबको मंत्र-मुग्ध करने वाला है।

उपरोक्त पउड़ी में जहां एक तरफ तो पूर्ण संत की उपमा का गायन हुआ है वहीं दूसरी ओर प्रभु परमेश्वर की महिमा बयान की गई है उसके मोहित करने वाले रूप पर सब बलिहार जाते हैं जैसा कि गुरबाणी में अन्यत्र भी इसी भाव के दर्शन होते हैं :

उसतति कहनु न जाइ मुखहु तुहारीआ ॥
मोही देखि दरसु नानक बलिहारीआ ॥
(पन्ना १३६१)

संत जनों की महिमा भी अकथनीय है क्योंकि वे प्रभु की रज़ा में हर पल राज़ी रहते हैं और धर्म के अनुसार हर कार्य पूर्ण मर्यादा में रहकर ही करते हैं। यही तो सत्य का मार्ग है जिस पर चलकर नाम तथा नामी अभेद हो जाते हैं जैसा कि जपु जी साहिब में जिज्ञासु के हृदय का प्रश्न उठाकर उसका सहज जवाब भी श्री गुरु नानक देव जी ने दिया है। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि सत्य स्वरूप परमेश्वर को कैसे पाया जा सकता है? झूठ और विकारों का पर्दा कैसे हट सकता है?

श्री गुरु नानक देव जी का सहज जवाब कलयुगी जीवों का मार्ग दर्शन करता है कि उस मालिक की रज़ा में राज़ी रहना ही सत्य का मार्ग अपनाना है और झूठ से छुटकारा पाने का एकमात्र राह है और यह रज़ा (हुक्म) जीव की उत्पत्ति से भी पूर्व लिख दिया गया है। पावन बाणी प्रमाण है :

किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ॥
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥
(पन्ना १)

वस्तुतः संत एवं प्रभु के गुण दोनों ही विस्मयकारी हैं, जीवों को मोहित करने वाले हैं।



ख़बरनामा

ढाडी व कवीशरी सभायों द्वारा जत्थेदार अवतार सिंघ को स्वर्ण तमगे से सम्मानित किया गया।

श्री अमृतसर : २५ जुलाई : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष, जत्थेदार अवतार सिंघ को ढाडी सभा पंजाब के अध्यक्ष ज्ञानी बलदेव सिंघ तथा कवीशरी सभा के अध्यक्ष ज्ञानी गुरिंदरपाल सिंघ बैंका ने लोई, सिरोपाउ, स्वर्ण तमगे और सम्मान चिन्ह देकर सम्मानित किया। इस समय उनके साथ सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ, जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब, सिंघ साहिब ज्ञानी जगतार सिंघ, मुख्य ग्रंथी, सचखंड श्री हरिमंदर साहिब और सिंघ साहिब ज्ञानी मल्ल सिंघ जत्थेदार, श्री केसगढ़ साहिब, श्री अनंदपुर साहिब भी उपस्थित थे। सचखंड श्री हरिमंदर साहिब के केंद्रीय सिक्ख संग्रहालय में जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी का ज्ञानी बलदेव सिंघ एम. ए ने विशेष सम्मान करने से पूर्व अध्यक्ष साहिब द्वारा पंथ के लिए की जा रही सेवाओं का ज़िक्र किया। उन्होंने कहा कि दुनिया के कोने-कोने में विचरण कर सिक्ख इतिहास के प्रति संगत को विस्तृत जानकारी देने वाले ढाडी व कवीशरी जत्थो का अध्यक्ष साहिब दिल से सम्मान करते हैं और इन्होंने प्रत्येक जत्थे का पांच-पांच लाख का बीमा भी करवाया है। उन्होंने कहा कि ढाडी व कवीशरी सभा शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अध्यक्ष साहिब की ऋणि है।

शिरोमणि गु. प्र. कमेटी ने प्राकृतिक कृषि सम्बंधी माहिरों से अहम विचारें की

श्री अमृतसर : २७ जुलाई : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा अपने प्रबंध तले गुरुद्वारा साहिबान की ज़मीन में ५-५ एकड़ में प्राकृतिक कृषि करने सम्बंधी मुख्य निर्णय लिया है। प्राकृतिक कृषि को मौलिक रूप देने के लिए शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अधिकारियों की एक विशेष एकत्रिता तेजा सिंघ समुंदरी हाल में कृषि माहिरों के साथ हुई। जिसमें स. बलविंदर सिंघ छीना मुख्य कृषि अधिकारी श्री अमृतसर ने ऐतिहासिक करार देते हुए कहा कि किसानों द्वारा अपनी फसलों को ज़रूरत से अधिक मात्रा में डाली जा रही खाद्य और कीटनाशक दवाईयों के कारण कैंसर तथा उच्च रक्तचाप जैसी भयानक एवं जान लेवा बिमारियों का फैलाव बहुत बढ़ चुका है जो कि गंभीर चिंता का विषय है।

उन्होंने कहा कि शिरोमणि गु. प्र. कमेटी ने प्राकृतिक कृषि से अनाज पैदा कर गुरु घर के लंगर में संगत के लिए जो दवाईयों रहित लंगर तैयार करने का उद्यम किया है, इसके सार्थक परिणाम सामने आएंगे। उन्होंने कहा कि शुरू-शुरू में बिना खाद्य और दवाई के फसल का झाड़ कुछ कम निकलता है परंतु अगर इसके बाज़ारी दाम की बात करें तो वो दवाईयों आदि द्वारा पैदा की फसल से कहीं अधिक दाम पर बिकता है। उन्होंने कहा कि खाद्य, दवाई के बिना देसी रूड़ी या फिर गंडोआ खाद्य तैयार कर बढ़िया फसल तैयार की जा सकती है, इस तरह तैयार की फसल द्वारा किसी प्रकार की बिमारी आदि नहीं लगती। उन्होंने कहा कि सरकार प्राकृतिक कृषि सम्बंधी समय-समय पर किसानों को प्रेरित करती रहती है और हमारी कृषि माहिर प्राकृतिक कृषि करने के लिए शिरोमणि गु. प्र.

कमेटी को हर प्रकार का सहयोग देंगे।

ज़िक्रयोग्य है कि कुछ समय पहले ही जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी की अगुवाई में हुई कार्यकारिणी कमेटी की अहम बैठक में यह निर्णय लिया गया है कि शिरोमणि गु प्र कमेटी के प्रत्येक गुरद्वारा साहिब की ज़मीन में पांच-पांच एकड़ में प्राकृतिक कृषि की जाए ताकि लंगर में साफ-सुथरा और बिमारी रहित अनाज का प्रयोग किया जाए।

इस समय डॉ रूप सिंघ सचिव, शिरोमणि गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी ने स बलविंदर सिंघ छीना मुख्य कृषि अधिकारी को सिरोपाउ देकर सम्मानित करते हुए कहा कि जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी की पूर्ण इच्छा है कि गुरु के लंगर में संगत के लिए कीटनाशक दवाईयों रहित प्राकृतिक कृषि वाले अनाज का प्रयोग किया जाए, जिसको मौलिक रूप देने के लिए कृषि माहिरों के साथ एकत्रिता की गई। उन्होंने सेक्शन ८५ के मैंबरों को कहा कि प्राकृतिक कृषि करने सम्बंधी कार्यकारिणी कमेटी द्वारा किए गए निर्णय को तुरंत अमल में लाया जाए।

राजस्थान सरकार पुस्तक 'नवां उजाला' से सिक्ख गुरु साहिब की तसवीर फौरन हटाए : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : ३ अगस्त : जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी ने कहा कि किसी भी दुनियावी व्यक्ति या खुद को बाबा कहलाने वाले व्यक्ति की तसवीर सिक्ख गुरु साहिबान के बराबर नहीं लगाई जा सकती।

प्रेस विज्ञप्त में उन्होंने कहा कि राजस्थान सरकार द्वारा स्कूलों में नैतिक शिक्षा व साधारण ज्ञान के विषय पर प्रकाशित पुस्तक 'नवां उजाला' जो कि तृतीय कक्षा के बच्चों को पढ़ाई जाती है, में साधारण व्यक्तियों के साथ श्री गुरु नानक देव जी तसवीर छापकर घोर अपमान किया गया है। उन्होंने कहा कि राजस्थान के जोधपुर में ८० प्रतिशत से ज्यादा स्कूलों के विद्यार्थियों को आसाराम के महान संत होने की शिक्षा दी जा रही है, जिससे बच्चों के भविष्य से खिलवाड़ हो रहा है। उन्होंने कहा कि अपराधी किस्म के व्यक्तियों के साथ गुरु नानक साहिब की तसवीर प्रकाशित करने से देश-विदेश में बसते सिक्खों के मनों को भारी ठेस पहुंची है। उन्होंने कहा कि सरकार को चाहिए कि वह फौरन इस विवादत पुस्तक पर पाबंदी लगाए तथा इस पुस्तक को छापने वालों के खिलाफ जांच कर सख़्त कार्यवाई करे।

उन्होंने कहा कि गुरु साहिब महान परोपकारी, दयालु तथा सच का मार्ग दर्शाने वाले थे, इसलिए ऐसे अपराधी व्यक्ति व अन्य व्यक्तियों की तसवीरों को गुरु साहिबान की तस्वीरों से फौरन हटाया जाए। अगर कोई व्यक्ति देश, धर्म, कौम के लिए अच्छा काम करता है तो उसकी प्रशंसा करनी चाहिए, उनके किए कामों की मिसाल दी जा सकती है किंतु इसका मतलब यह नहीं कि उन लोगों की तसवीरें गुरु साहिबान की तसवीरों के बराबर लगाई जाएं। उन्होंने कहा कि ऐसी पुस्तकें जिन पर ऐसी तसवीरें छापी गई हैं उनको फौरन ज़ब्त किया जाए और आगे से किसी भी दुनियावी व्यक्ति की तसवीर गुरु साहिबान के बराबर न छापी जाने को यकीनक बनाया जाए। ☬

प्रिंटर व पब्लिशर स दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०९-२०१५